हिन्दी प्रचारिणी सभा, कैनेडा की त्रैमासिक पत्रिका
Hindi Chetna • Quarterly Magazine of Hindi Pracharini Sabha, Canada
वर्ष ११, अंक ४४, अक्टूबर 2009 Year 11, Issue 44, October 2009

जितना आप सोच सकते हैं उससे कम में अपने अपने देश के साथ जुड़ें

Bell TV के साथ , केबल से 55% से भी अधिक कम कीमत पर[1], अपने देश से भी अधिक क्रिकेट देखने को अपना लक्ष्य बना सकते हैं। इस मौसम, खेल में शामिल हो जाओ।

दक्षिण एशियाई कोम्बो

ATN SONY Entertainment Television

$10/MO.[2] 12 महीने के लिए

Bell TV बल्ले बाजी करने जा रहा है बड़ी विशेषताओं के साथ जैसे
. 500 से अधिक डिजिटल चैनल चुनाव के लिए अधिकाँश HD में मिलाकर
. उत्कृष्ट पिक्चर क्वालिटी नियमित केबल से 10 गुणा बेहतर
. शामिल करें चिन्ता मुक्त पूरा होम सेटप[3]

ICT North: 1 888 735-9777

Bell TV देखना अब हुआ बेहतर

Offer ends Feb. 28, 2009. Available where access and line of sight permit. Digital service fee ($3/mo. per account) extra. Upon early termination, price ajustment charges apply. Subject to change without notice. Taxes extra. Other conditions apply. (1) As of Dec. 12, 2008. Compared to Rogers' South Asian combo billed $24.95/mo. (2) With new account on a min. 2-yr. contract and subscription to South Asian combo at time of activation. Regular rates apply at the end of the promotional period. (3) Details at bell.ca/installationincluded.

इस अंक में...

३ संपादकीय
५ प्रज्ञा परिशोधन– इंद्रा वडेरा
७ हिन्दी ब्लाग इन दिनों में– आत्माराम शर्मा
२२ कहानी ' संस्कार शेष'– कृष्ण बिहारी
२६ कहानी ' माई बाप' देवी नागरानी
२७ लघु कथाएँ– बलराम अग्रवाल
२९ लघु कथाएँ– प्रेम नारायण गुप्त
१५ आपकी कलम से (पाती)
३५ चित्र काव्य शाला
३३ विलोम चित्रकाव्यशाला
४२ समाचार
२९ समीक्षा – मदिरालय– श्रीनाथ द्विवेदी
४ आप बीती (कैनेडा की) – अमित सिंह
३१ श्रीमती साध्वी बाजपेयी – आशाबर्मन
४७ प्राप्त पुस्तकें

कविताएँ

१० अंधकार – किरन सिंह
१० बर्फ के कारागार से– जगदीश चन्द्र शारदा
१० ग़ज़ल– चाँद शुक्ला
१० हिन्दी दिवस–संदीप त्यागी
११ अहिल्या–तेजेन्द्र शर्मा
१२ माटी मेरे वतन की– यशपाल लाम्बा
१२ उन्मुक्त–भगवत शरण श्रीवास्तव
१३ पँथ नया बनाऊँगी– शशि पाधा
१३ यह किसकी चिता है– शाहनाज़ अब्बास
१४ ग़ज़ल–विज्ञान व्रत
१४ मुलाकात नहीं होती– नीना पाल
१४ पानी पानी–कृष्ण कुमार
१४ पायल की झनकार–नरेन्द्र श्रोवर
२१ उर्दू ग़ज़ल– महेश नंदा
३४ खोखले रिश्ते–बृजेन्द्र श्रीवास्तव
३७ नींद चली आती है – डॉ. सुधा ओम ढींगरा

"हिन्दी चेतना" सभी लेखकों का स्वागत करती है कि आप अपनी रचनायें प्रकाशन हेतु हमें भेजें। सम्पादकीय मण्डल की इच्छा है कि " हिन्दी चेतना" साहित्य की एक पूर्ण रूप से संतुलित पत्रिका हो, अर्थात् साहित्य के सभी पक्षों का संतुलन। एक साहित्यिक पत्रिका में आलेख, कविता और कहानियों का उचित संतुलन होना आवश्यक है, ताकि हर वर्ग के पाठक पढ़ने का आनन्द प्राप्त कर सकें। इसीलिए हम सभी लेखकों को आमन्त्रित करते हैं कि हमें अपनी मौलिक रचनाएँ ही भेजें। अगले अंक के लिए अपनी रचनाएँ शीघ्रातिशीघ्र भेज दें। अगर संभव हो तो अपना चित्र भी साथ अवश्य भेजें।

संस्मरण

३८ एक परंपरा का अंत था– रूप सिंह चंदेल

आगामी अंक की घोषणा

* अफरोज़ ताज, सुदर्शन प्रियदर्शनी एवं मधु संधू की कहानी।
* प्राण शर्मा से डॉ. सुधा ओम ढींगरा की ग़ज़ल विधा पर बातचीत।
* मृदुल कीर्ति का लेख वैचारिक ऊर्जा।
* बच्चों के लिए – राधा गुप्ता।
* कविताएँ , व्यंग्य।
* नव वर्ष में कुछ नये स्तम्भ।

रचनाएँ भेजते हुये निम्न लिखित नियमों का ध्यान रखें :

1 हिन्दी चेतना, अप्रैल, जुलाई, अक्टूबर, तथा जनवरी में प्रकाशित होगी।
2 प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों का पूर्ण उत्तरदायित्व लेखक पर होगा।
3 पत्रिका में राजनैतिक तथा विवादास्पद विषयों पर लिखित रचनाएँ प्रकाशित नहीं की जायेंगी।
4 रचना के स्वीकार व अस्वीकार करने का पूर्ण अधिकार संपादक मंडल का होगा।
5 प्रकाशित रचनाओं पर कोई पारिश्रमिक नहीं दिया जायेगा।
6 पत्रिका में प्रकाशित सामग्री लेखकों के निजी विचार हैं। संपादक तथा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

हिन्दी चेतना वर्ष २००९

संरक्षक एवं प्रमुख संपादक
श्री श्याम त्रिपाठी

सह संपादक
डॉ. निर्मला आदेश (कैनेडा)
डॉ. सुधा ओम ढींगरा (अमेरिका)

संपादकीय मंडल
अभिनव शुक्ल (अमेरिका)
गजेन्द्र सोलंकी (भारत)
इला प्रसाद (अमेरिका)
अमित सिंह (भारत)

प्रबंध संपादक
डॉ. हरीश चन्द्र शर्मा (कैनेडा)
डॉ. ओम ढींगरा (अमेरिका)

मार्ग दर्शक मंडल
डॉ. कमल किशोर गोयनका (भारत)
राज मेहेश्वरी (कैनेडा)
सरोज सोनी (कैनेडा)
उदित तिवारी (भारत)
विनोद चन्द्र पाण्डेय (भारत)

प्रमुख : विदेश
अनिल शर्मा (थाइलैंड)
सुरेशचन्द्र शुक्ला (नार्वे)
यासमीन त्रिपाठी (फ्रांस)
राजेश डागा((ओमान)

हिन्दी प्रचारिणी सभा
महाकवि प्रो. आदेश (संरक्षक)
श्याम त्रिपाठी (अध्यक्ष)
भगवत शरण श्रीवास्तव (उपाध्यक्ष)
सुरेन्द्र पाठक (मंत्री)
डॉ. चन्द्र शेखर त्रिपाठी (उपमंत्री)
श्रीमती सुरेखा त्रिपाठी (कोषाध्यक्ष)
शालीन चन्द्र त्रिपाठी (सदस्य)
सुरभि गोबर्धन (सदस्य)

चेतना सहायक
डैनी कावल
अँकुर टेकसाली
अजय मनोचा

आया पतझड़
झड़े पत्ते
उड़ गए आँधी संग
दम तो उसका,
जो फिर भी खड़ा रहा होगा।

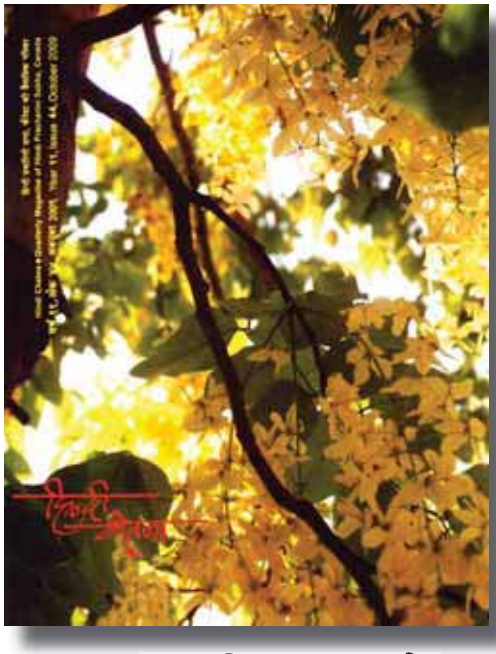

अरविंद नराले

Hindi Chetna is a literary magazine published quarterly in Toronto, Ontario under the editorship of Mr. Shiam Tripathi. Hindi Chetna aims to promote the Hindi language, Indian culture and the rich heritage of India to our children growing in the Canadian society. It focuses on Hindi literature and encourages creative writers, young and old, in North America to write for the magazine. It serves to keep readers in touch with new trends in modern writing. Hindi Chetna has provided a forum for Hindi writers, poets and readers to maintain communication with each other through the magazine. It has brought many local and international writers together to foster the spirit of friendship and harmony.

Hindi Chetna
6 Larksmere Court,
Markham, Ontario,
L3R 3R1
Phone(905) 475 - 7165
Fax: (905) 475 - 8667
e-mail: hindichetna@yahoo.ca

■ सम्पादकीय

फ़ादर कामिल बुल्के विशेषांक मेरे सामने है इसकी संपन्नता के लिए मैं चेतना परिवार का अत्यन्त आभारी हूँ, विशेषकर इला प्रसाद का जिन्होंने मौलिक सामग्री एकत्रित करके इन पृष्ठों में एक विदेशी संत को पुनः जीवित कर दिया । और इससे भी बढ़कर डॉ. सुधा ओम ढींगरा का जिन्होंने न जाने कितना समय लगाकर इस अंक को इस लक्ष्य तक पहुँचाया। अमित कुमार सिंह , डैनी कावल , कलाकार अरविंद नराले जी के हाथों ने इसे नव जीवन प्रदान किया। अभिनव शुक्ल ने इसके पर लगा दिये और इसे विश्व के करोड़ो हाथों तक पहुँचा दिया। मैं उन सभी ख्याति प्राप्त लेखकों का हृदय से आभारी हूँ , जिन्होंने फादर कामिल बुल्के विशेषांक में अपना, योगदान दिया। विशेषरूप से डॉ. दिनेश्वर प्रसाद, डॉ. शमशेर बहादुर सिंह, डॉ. पूर्णिमा केडिया, डॉ. श्रीनाथ द्विवेदी, महाकवि प्रो. हरिशंकर आदेश, धर्मपाल जैन ,आत्मा राम शर्मा, डॉ. मृदुला प्रसाद , अमितकुमार सिंह एवं प्यारे लाल शुक्ल, आदि ।

पत्रों से आप सुधी जनों ने अवगत करवा दिया है –आपको हमारी पत्रिका पसन्द आई। आपकी प्रतिक्रियाओं ने हमें बहुत प्रोत्साहित किया है। मैं हिन्दी मीडिया , अभिव्यक्ति, साहित्य शिल्पी , सृजनगाथा और कथा चक्र आदि का विशेष आभारी हूँ, जिन्होंने 'हिन्दी चेतना' कामिल बुल्के विशेषांक पर समीक्षात्मक लेख छापे। इस अंक में हमने एक नया स्तम्भ (हिन्दी ब्लाग में इन दिनों) प्रारम्भ किया है, जिसके लेखक हैं श्री आत्माराम शर्मा।
जनवरी 2010 से जैसा कि आपको ज्ञात है, हम डॉ. अंजना संधीर की एक नई लेखमाला " अहमदाबाद से अमरीका तक" प्रकाशित करने जा रहे हैं । पाठकों की जिज्ञासा को ध्यान में रखते हुए हम एक नया स्तम्भ, अधेड़ उम्र में थामी कलम' भी आपकी सेवा में प्रस्तुत कर रहे हैं।
इसमें जीवन के अतीत के संस्मरणों का समावेश होगा और उन कटु सत्यों को झाँकने का भी अवसर मिलेगा, जो हम भोगते आ रहे हैं। अंक में कुछ बिलम्व होने के लिए क्षमा याचना।
आओ दीवाली पर हिन्दी के दीप जलायें , और विश्व के कोने – कोने में 'हिन्दी की चेतना' को पहुंचायें

श्याम त्रिपाठी
प्रमुख संपादक

हिन्दी चेतना की समीक्षा अवश्य देखें –
http:// Katha Chakra. blogspot.com

चित्त की प्रसन्नता ही व्यवहार में उदारता बन जाती है।
प्रेमचंद

हिन्दी चेतना को पढ़िये !
पता :–
http://hindi-chetna.blogspot.com/

हिन्दी चेतना को आप आन लाइन भी पढ़ सकते हैं।
Visit Our Web Site -
Http://www.vibhom.com
or home page पर publication में जाकर

घर बैठे पुस्तकें प्राप्त करें http://www.pustak.org

एक सुखद सूचना :–

अगले अंक से हम एक नई लेख माला "अहमदाबाद से अमरीका तक" प्रस्तुत कर रहे हैं। लेखिका हैं सुप्रसिद्ध कवयित्री डॉ. अंजना संधीर। इसमें वह अपने विश्वविद्यालय के शिक्षण के खट्टे –मिट्ठे अनुभवों से परिचित करायेंगी।

(संपादक)

आप बीती (कैनेडा की)

अमित कुमार सिंह (कैनेडा)

जब मैं कॉलेज में पढ़ता था, तो यू.के., अमेरिका और आस्ट्रेलिया में भारतीयों के साथ भेद –भाव की खबरें सुनता था। आस्ट्रलिया में तो ये समाचार आज भी सुनने को मिलते हैं। मैं इन बातों पर पहले ध्यान नहीं देता था। मगर दोस्तो! जो घटना मैं आपको बताने जा रहा हूँ , उसे सुनकर आपको भी आश्चर्य होगा।

कुछ महीने पहले मैं कनाडा के टोरंटो शहर में आया। मेरा यहाँ आगमन अपने आफिस के कार्यवश हुआ। शुरुआत में यहाँ का वातावरण और खानपान मुझे बड़ा भाया। पर फिर धीरे-धीरे इन खानों से मैं ऊबने लगा। विदेशी खाने अब मेरी भूख न मिटा पाते थे और खाने से तृप्ति भी न मिलती थी। मेरा देसी मन अपने भारतीय खाने को तरसने लगा। जहाँ तक मेरे खाना बनाने की बात थी, तो जनाब मैंने एक-दो बार अपनी पाक कला पर भरोसा किया और इंटरनेट से खाने की विधि पढ़ कर कुछ बनाया । जिसे बाद में मुझे कचरे में डालना पड़ा और खुद भूखा सोया ।

अफसोस! अपनी भूख मिटाने के लिए सिवाय उल्टी सीधी चीज़ें खाने के अलावा मेरे पास कोई चारा न था। देसी खाने की मेरी तलाश चलती रही। एक दिन एक सज्जन ने बताया अगर तुम्हें देसी खाना खाना है तो यहाँ ब्लोर और यंग के पास एक देसी रेस्टोरेंट है, वहाँ , तू वहाँ चला जा– "बढ़िया खाना मिलता है।"

मैं और मेरा एक मित्र दोनों बड़े उत्साह के साथ वहाँ गये। बाहर बिरयानी स्पेशल का पोस्टर पढ़ कर दिल उछलने लगा और पेट में चूहे दौड़ने लगे। सोचा, आहा! महीनों बाद मनपसंद खाना खाने को मिलेगा। रेस्टोरैंट में जाकर हमने आसन ग्रहण किया और वेटर का इंतज़ार करने लगे। कुछ देर बाद एक देसी वेटर आया बड़े ही अजीब नज़रों से हमें घूरते हुए मीन्यू पकड़ा गया, मानो मन में इसने सोचा ये देसी कहाँ से मेरी दुकान में चले आये। मेरे मित्र ने कहा कि इसे क्या हुआ? इस बन्दे ने हमें ऐसे क्यूँ देखा? वेटर का ये व्यवहार मुझे भी कुछ अटपटा सा लगा था, लेकिन मैनें मित्र से कहा दोस्त! हो सकता है उसका आज मूड सही ना हो , इसलिये उस वेटर ने हमारे साथ ऐसा व्यवहार किया। फिर बिरयानी का ऑडर देकर हम उसके ख्यालों में डूब गये। कुछ देर बाद ही हमने देखा कि एक अंग्रेज भी बिरयानी खाने रेस्टोरेंट में घुसा। उसे देखते ही उस खडूस वेटर के चेहरे पर खुशी छा गयी और उसने उस गोरे को बड़े अदब के साथ मेन्यू पेश किया।

इस दृश्य को देखकर मैं और मेरा मित्र दोनों चौंक पड़े। वेटर के अचानक व्यवहार परिवर्तन को देख हम दोनों भौचक्के रह गये। आखिर ये बंदा अचानक से कैसे बदल गया? हमने सोचा कि शायद अब इसका मूड ठीक हो गया होगा। जल्द ही हमारी ये गलतफ़हमी दूर हो गई जब उसने हमे बिरयानी लाकर दी। उसके चेहरे पर वही मनहूसियत झलक रही थी। हम फिर सोच में पड़ गए। मित्र ने कहा, यार सोचना छोड़! और बिरयानी का मज़ा लो ।

हम लोग खाने का स्वाद लेने लग गये, लेकिन मेरी नज़र अब भी उस वेटर का पीछा कर रही थी, जो उस अंग्रेज़ को बड़े ही प्यार से खाना परोस रहा था। मेरे मन ने मुझे समझाया कि शायद ये व्यक्ति उसका कोई पुराना ग्राहक होगा इसलिए उसके साथ वो इस प्रकार से पेश आ रहा है। लेकिन शीघ्र ही मेरे मन का ये तर्क भी निरर्थक साबित हुआ। एक और गोरे ने रेस्टोरेंट में प्रवेश किया और हमारे उस देसी वेटर ने उसका भी बढ़– चढ़ कर स्वागत किया। मेरा कोमल मन इस परिदृश्य को देखकर हैरान हो गया। मन में जो अच्छी स्मृतियां थीं, एक अपनेपन का अहसास था ,उसकी नींव ही अब डगमगाने लगी थी। यह मेरे लिए एक बिल्कुल ही नया अनुभव था।

दिमाग की नसें मचलने लगी, मन में अंर्तद्वंद शुरू हो गया कि ऐसा क्यूँ? एक देसी का दूसरे देशी के साथ ऐसा आचरण आखिर क्यूँ? हमारी संस्कृति में तो अतिथि देवो भव: होता है। आखिर ऐसा क्या हो गया कि हमारे देसी भाई बंधु अपनी सभ्यता और संस्कृति से ही मुँह मोड़ने लगे हैं। मन नें तर्क दिया, हो सकता है , ये सिर्फ एक इस इन्सान की आदत हो, सारे ऐसे नहीं हों। यह सोच कर मन को कुछ शांति हुई और हम खाना खत्म कर रेस्टोरेन्ट से बाहर निकल आये। खाने का उत्साह खत्म हो चुका था और मन किसी और सोच में उलझा हुआ था। इस सत्य को मैं अपने गले से नीचे नहीं उतार पा रहा था कि परदेस में देशी ही देशी को देख चिढ़ते हैं, मानों ये कह रहें हों कि ये देसी कहाँ से मुहँ उठा कर चला आया कनाडा में? इन घट्नाओं के बाद मैंने भारतीय दुकानों में जाना छोड़ दिया। लेकिन एक कोशिश सी मन में रह गई कि ऐसा क्यूँ हो रहा है?आखिर वो परदेस में बसने के बाद अपने ही भाई-बंधुओं से ऐसा व्यवहार क्यूँ करतें हैं? मै मन ही मन भगवान से ये प्रार्थना कर रहा था कि मेरी ये सोच सच साबित हो कि देसी लोग अभी भी परदेश में अपनी सभ्यता नहीं भूले है।

धीरे-धीरे मैं इन बातों को भूलता गया और अपने ऑफिस कार्य में व्यस्त हो गया। और एक दिन फिर मेरे वापसी का वक्त आ गया। मैंने एयरपोर्ट जाने के लिए एक टैक्सी बुक करा दी। दूसरे दिन मैं टैक्सी का इतजार कर रहा था लेकिन वह नहीं आई। मैंने टैक्सी वाले को फ़ोन किया तो पता चला उसकी टैक्सी ख़राब हो गयी है। वो अब मुझे लेने नहीं आ सकता। ये सुनकर मै परेशान हो गया और सड़क पर टैक्सी ढूँढ़ने लगा। शायद मेरी किस्मत ही खराब थी, कोई टैक्सी खाली ही नहीं दिख रही थी। वक्त गुजरता जा रहा था और लगता था की शायद मेरी फ्लाइट छूट जायेगी। उसी समय एक कार मेरे पास आकर रुकी, एक सरदार जी कार से उतरे और बोले आपने शायद ध्यान न दिया हो , मै आपका पड़ोसी हूँ। आप कुछ परेशान हैं । मैंने उन्हें बताया कि ! मै एयरपोर्ट के लिए ही निकला हूँ, लेकिन अब लगता है कि टैक्सी न मिलाने के कारण मेरी फ्लाइट छूट ही जायेगी।

शेष पृष्ठ 6 पर देखें

प्रज्ञा परिशोधन

इन्द्रा (धीर) वडेरा

प्रसंग :

धन–वैभव प्रदर्शन,लक्ष्मी का दुरुपयोग

प्रश्न : कुछ दिनों के लिए अपने बच्चों के पास आई हूँ और हैरान हूँ, यहाँ का जीवन देख कर ! इतने बड़े-बड़े घर और उनमें रहने को कोई भी नहीं ! दिन-भर बच्चे अपने काम-काज में व्यस्त रहते हैं और केवल पति-पत्नी के सोने के लिए इतना बड़ा 11 बेड-रूम का महल ! हमारे बच्चे उस समाज के अनुयायी बन चुके हैं, जो समाज आँखें बँद किए बैठा है ! बच्चे पतन की ओर चले जा रहे हैं और आत्म-संयम कहीं दिखाई ही नहीं देता ! आपके पास कोई सुझाव या समाधान है ? धर्म क्या कहता है ? शास्त्र की क्या पुकार है ?
-- शारदा सूद

उत्तर : भारतीय इतिहास के पन्नों पर कुछ निखरे हुए व्यक्तित्व ऐसे उभर कर आए हैं जिन्होंने हमें आदर्शपूर्ण जीवन जीने की दिशा दी है ! माँ मदालसा एक ऐसा उदाहरण है ! माँ मदालसा के पहले तीन पुत्र ब्रह्म ज्ञानी बन गए थे, चौथे पुत्र अलर्क को उन्होंने राजा बनाया ! अलर्क नें पूछा : "माँ बड़े भाइयों को साधन संपन्न नगरवासी जीवन के अपेक्षा कम साधनों से युक्त बनवासी जीवन क्यों रुचा ?"
माँ बोली, "बेटे, बताओ जिसका उद्देश्य नदी पार करना हो वह सुविधा सामग्री से भरी विशाल, लेकिन छिद्र वाली नौका चुनेगा या सामान्य सी छिद्रहीन नौका ?"
अलर्क नें कहा, "निश्चित रूप से छेदहीन नौका ही चुनी जाने योग्य है !"
माँ ने समझाया– "बेटे, सांसारिक सुख-सुविधाओं भरे जीवन में दोषों के छिद्र बन जाते हैं ! साधना-युक्त जीवन से व्यक्तित्व छिद्रहीन बनता है ! इसीलिए साधन-सुविधाएं छोड़कर छिद्रहीन व्यक्तित्व वाला जीवन ही चुना जाना चाहिए ! तुम भी ऐसा ही व्यक्तित्व बनाना, साधनों को जरूरत से ज्यादा महत्व मत देना !"
शारदा जी, आप अपने बच्चों के जीवन में दोषों के छिद्र बन रहे देख रही हैं और आप इस विषय में चिंतित हैं ! और आप चाहती हैं कि उनके अपव्यय के छिद्र बंद हों !
रही बात समाधान की, समाधान तो आपके बच्चों के पास भी है लेकिन उस समाधान के लिए आत्म-संयम की आवश्यकता है और लगता है कि आपके बच्चे आत्म-संयम से दूर होते चले गए !
धर्म तो यह कहता है कि यदि विश्व-परिवार भूखा सोए तो हर मानव का यह धर्म है कि वह अपनी आवश्यकताओं के हाथ छोटे कर जीएँ !
जहाँ तक इन्सानियत की बात है, इन्सानियत भी यही कहती है कि पड़ोसी के पास तन ढकने को कपड़ा न हो तो अपनी चादर छोटी कर उसका तन ढकें, अपने पैर सिकोड़ छोटी चादर ले सोएँ !
धन-वैभव एक दैवी-संपदा है जो मानव को इंद्रिय-शक्ति, विचार-शक्ति, और समय-संपदा साधन के सदुपयोग से प्राप्त होती है ! शारदा जी, आपके बच्चों ने मेधा का सदुपयोग कर इस दैवी-संपदा को प्राप्त किया है ! प्रज्ञा मिली तो उसका सदुपयोग आवश्य हुआ, लेकिन जब धन-वैभव संपन्न जीवन हुआ, तो वह उसका सदुपयोग नहीं कर पाए और वह उसके उपभोग में जीवन बिता रहे हैं ! धन की सार्थकता तो नेकी से कमाने और भलाई में खर्च करने में ही है !
" धन-वैभव प्रदर्शन एक भेड़ चाल है," पिता श्री का यह वाक्य बार-बार दोहराना मेरी चेतना पर विशेष रुप से अंकित है और इसी बात को ओशो एक छोटी सी कहानी के रुप में कहते हैं : मास्टर जी बच्चों को गणित सिखा रहे थे और उन्होंनें कक्षा से प्रश्न किया : दस भेड़ें एक चार-दीवारी के अन्दर बंद हैं और एक भेड़ चार-दीवारी फांद कर बाहर जा निकली, अब कितनी भेड़ चार-दीवारी अंदर रह गई ? एक बालक उत्तर देने को उत्-सुक हाथ ऊँचा उठाए जा रहा था तो मास्टर जी नें उसे खड़ा हो उत्तर देने को कहा ! बालक बोला : कोई भी भेड़ चार-दीवारी में नहीं रहेगी, एक नें दीवार फांदी तो सब उसका अनुसरण करेंगी, गणित की बात आप जाने, मैं तो स्वभाव की बात कह रहा हूँ , भेड़ है तो आँख मूँद अनुसरण करेगी !
अपने धन का प्रदर्शन, ...सब आँख मूँद अनुसरण कर रहे हैं ! ...एक नें दीवार फाँदी तो बिना कारण पूछे और बिना कारण जाने सभी के सभी वही करने लगे ! शारदा जी, मैं आपका कष्ट जानती ही नहीं, बल्कि मानव जाती का यह हाल देख कर मैं आपके कष्ट में भागीदार भी हूँ !

शास्त्र क्या कहता है ?

संपूर्ण विश्व के रचयिता व रक्षा करने वाले ब्रह्मा जी ने भी देव, दानव एवं मानव को एकाक्षरी उपदेश दिया है :
जब देवता, असुर, एवं दानव लोग आत्म-कल्याण के लिए ब्रह्मा जी के पास पहुँचे तो ब्रह्मा जी ने "द" का उपदेश दे पूछा "द" उपदेश से आप क्या समझे ? तो देवताओं का कहना था : --स्वर्ग का भोग भोगते हुए हम ब्रह्म चिंतन भूल गए थे इस लिए आप ने हमें इंद्रियों के दमन का उपदेश दिया है !
ब्रह्मा जी द्वारा देव, दानव एवं मानव को दिया हुआ एकाक्षरी उपदेश संक्षेप में कुछ यूँ है :
देवता लोगों के लिए : "इंद्रियों का दमन"
असुरों के लिए : "दूसरों के प्रति दया भाव"
मानव के अंत:करण से लोभवृत्ति को उखाड़ फैंकने के लिए : "दान करने की वृत्ति" !
वेद भी हमें यही सीख देते हैं : "त्रयो धर्मस्य स्कन्धा: यज्ञो दान-मध्ययनं च"
यज्ञ --जिसमें दया सर्वोपरि यज्ञ है ; दान ; एवं स्वाध्याय --स्वाध्याय से इंद्रियों का दमन होता है !
शास्त्र उपार्जन के उपयोग पर ध्यान और उपभोग पर नियंत्रण ही सिखाता है !
एक ओर शास्त्र नीति पूर्वक धन कमाना आवश्यक बताते हुए नीती-पूर्वक धन कमाने की प्रेरणा देते हैं और दूसरी ओर शास्त्र

यह भी प्रेरित करते हैं कि धन के व्यय में भी अनीति ना वर्ती जाए यह भी इतना ही आवश्यक है !

आत्महित की बात :

अपनत्व का विस्तार कर लेने को जिनके पास अनमोल साधन हैं वह उन साधनों का उपयोग करें !

बुद्धिमानी की सही परख यही है कि जो कमाया जाय, उसका अनावश्यक संचय अथवा अपव्यय न हो ! आत्म-संयम में कमी ही हमें धन के अपव्यय और समय के दुरुपयोग की ओर ले जाती है ! जीवन में स्वयं उठना और दूसरों को उठाना ही श्रेष्ठता का परिचायक है !

विवेकी वही है जो सचेत है ! सचेत व्यक्ति का विवेक जागृत है कि समाज के सदस्य अपने जीवन का एक अंग हैं ! भारत भूमि पर ऐसे अनगिनत उदाहरण हैं जो पड़ोसी की सहायता हेतु अपनी आवश्यकताओं के पैर सिकोड़ छोटी चादर ले सोए हैं ! उत्तरी अमेरिका में भी हमारे सामने हमारे पड़ोस ही में अनेकों उदाहरण हैं जिन्हों नें अपना जीवन समाज को अर्पित किया है ! यह सब कर्म-योगी विश्व के सदस्यों के साथ आत्मीयता स्थापित करते हुए आत्मसत्ता का अनुभव और दूसरों को सुख पहुँचाने का रसोस्वादन ले रहे हैं !

शारदा जी, दूसरे को सुख देकर सुखी हो जाने में ही अपनत्व का विस्तार और आत्मसत्ता का अनुभव है ! इसी जीवन-रस अनुभव के लिए हमारा अन्त:करण तरसता है ! दूसरों की स-हायता करने से हमें आत्मीयता का एहसास होता है और अपने जीवन की सफलता का अनुभव भी ! दूसरे को सुख देने में ही हमारा आत्म- कल्याण छुपा है !

विषय गंभीर है, इस लिए फिर से दोहराना चाहूंगी :

जो धन नीति पूर्वक कमाया जाए यह आवश्यक है और इसके व्यय में भी अनीति ना वर्ती जाए यह भी इतना ही आवश्यक है!

जो हर साधन समर्थ होते हुए भी, आत्म-संयम रखते हुए, लक्ष्-मी का सोच-समझ कर प्रयोग करना लेकिन परमार्थ कार्य में सुनियोजित करके उसका सदुपयोग करना परमावश्यक है !

जो यदि विश्व-परिवार भूखा सोए तो हर मानव का यह धर्म है कि वह अपनी आवश्यकताओं के हाथ सिकोड़ें ! अपना जीवन वैभव-संपन्न हो तो दूसरों की सहायता करना हमारा फर्ज़ बन जाता है ! दूसरे को सुख देने में ही हमारा आत्मकल्याण छुपा है!

नेकी से कमाए गए धन को अपने और अपने परिवार के ऊपर खर्च कर हम उस धन की सार्थकता का दायरा सिकोड़ रहे ही दीखते हैं, लेकिन सत्य तो यह हैं कि हम आदर्शों से विमुख भी हो रहे हैं ! नेकी से कमाए धन को दूसरों की भलाई में खर्च कर हम उसी धन की सार्थकता का दायरा विश्व परिवार तक ले जाते हुए, आदर्श-पूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं ! इसी में हमारे जीवन का कल्याण छुपा है !!!

****

आप बीती (कैनेडा से) .....

यह सुनकर सरदारजी ने मेरे सामान को अपने कार में रख दिया और बोले चलिए जनाब।! एक बार फिर मेरे मन में विचारों का ए क तूफ़ान आया जिसने कनाडा की पुरानी कड़वी यादो को विस्मृ त कर डाला।

इन खट्टी मीठी यादों को सँजोकर मैं वापस भारत लौट आया। दिल में एक कसक रह गयी कि काश ! सारे अपने अप्रवासी भाई-बंधू ऐसे ही होते तो कितना अच्छा होता। हर एक भारत वासी विदेश से मीठी यादों के साथ वापस आता।

माननीय पाठको !

जैसा कि आपको विदित है , हर वर्ष "हिन्दी चेतना" किसी न किसी महान् साहित्यकार पर विशेषांक निकालती है। आगामी वर्ष का विशेषांक श्रद्धेय मदन मोहन मालवीय जी पर है। आपकी रचनाओं का स्वागत है। रचनाएँ शीघ्र भेजने की कोशिश करें।

श्याम त्रिपाठी
(प्रमुख संपादक)

"अधेड़ उम्र" में थामी कलम के अर्न्तगत आगामी अंक में आप कृपाल कौर और मालती सत्संगी की रचनाएँ पढ़ेंगे। आप भी कुछ कहना चाहें , उम्र की ओर मत ध्यान न दें। बस कलम उठा लें – और लिख डालें जो आपके मन में है।

श्याम त्रिपाठी

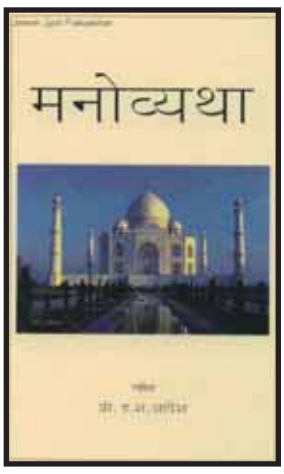

हिन्दी ब्लॉग में इन दिनों –

चेहरे की तलाश जारी है – आत्माराम शर्मा

इस नदी की धार में ठंडी हवा आती तो है
नाव जर्जर ही सही, लहरों से टकराती तो है
- दुष्यंत कुमार

अपने शुरूआती दौर के पहले पायदान को लाँघता हुआ हिन्दी ब्लॉग जगत अब दिनोंदिन गंभीर होता जा रहा है और दबी आवाज में ही सही हिन्दी के स्वनामधन्य आलोचक तक हिन्दी ब्लॉगिंग के महत्त्व को स्वीकारने लगे हैं। यह खुशी की बात तो है ही, लेकिन यहीं से असली चुनौती प्रारम्भ हो जाती है। जब आपके काम पर लोग नोटिस लेने लगें तो समझो मामला गंभीर हो गया है। और देखिये कि हिन्दी के ब्लॉगरों अब समकालीन समस्याओं पर गंभीरता से विमर्श कर रहे हैं। हिन्दी की चर्चित और नामी हस्तियों ने शौकिया ही सही, ब्लॉग लेखन शुरू कर दिया है।

गुज़रे दिनों ब्लॉग जगत के कुछ चर्चित और बहुत सीमित ब्लॉगरों की पोस्टों की चर्चा यहाँ की जा रही है। कोशिश की गयी है कि महत्त्वपूर्ण लोगों को इसमें शामिल किया जाये। लेकिन जैसा कि स्वाभाविक है कि एक आदमी की सीमाएँ सीमित हैं और वह सारा कुछ नहीं पढ़ सकता।

मीडिया ख़बर.कॉम पर *विनीत कुमार* ने 21 सितंबर को बड़ी ही महत्त्वपूर्ण रिपोर्ट लगाई। इसमें प्रोफेसर सुधीश पचौर के मार्फत कहा गया है कि हिन्दी नॉलेज की भाषा बने यह आज की महती जरूरत है। अपने विश्लेषण में उन्होंने रोचक स्थापनाएँ दीं , साथ ही प्रसून जोशी का भाषा के संदर्भ में दिया गया हालिया वक्तव्य कि जो भाषा अड़ गयी, वो सड़ गयी - भाषा के गंभीर पहलुओं को इंगित करती है। प्रोफेसर पचौरी भाषा के नाम पर शुद्धतावादी आग्रह और भाषा को महज संस्कृति के दायरे में रख कर देखने के पक्ष में नज़र नहीं आये। यही वजह है कि उन्होंने हिंदी में अंग्रेजी शब्दों के प्रयोग को चिंता के बजाय सुविधा और विस्तार का मामला बताया। उन्होंने कहा कि हिंदी को लेकर किसी भी तरह से, किसी भी रूप में हीन मानने और समझने की जरूरत नहीं है। अगर हमारे भीतर हीनता आती है, तो ये हिंदी की वजह से नहीं बल्कि इसकी कोई और ही वजह है, जिसकी हमें तलाश की जानी चाहिए।

संजीव तिवारी ने इंटरनेट पर हिन्दी में टाइप करने के जानकारी से भरी बहुत उपयोगी पोस्ट लगाई। लिंक थी : htt://aarambha.blogspot.com/2009/09/blogspot-post_17.html.
हिन्दी ब्लॉगिंग को समृद्ध और पठनीय बनाये रखने वालों में से एक *किशोर चौधरी* http://kishorechoudhry.blogspot.com. ने अपनी लाजबाब कहानी खुशबू बारिश की नहीं, मिट्टी की है... अपने ब्लॉग पर पोस्ट की। कहानी के गद्य की खूबसूरती देखिये : 'इतनी ही दुनिया होती है जिसे वर्तमान कहते हैं, भविष्य की अनदेखी तस्वीर के सम्मुख अतीत के विशाल पहाड़? हमारे वर्तमान को बौना और निरर्थक कर दिया करते हैं। फिसल चुके समय से उपजी आहें संतोष का उच्छवास करती है और स्मृतियाँ उन कलगी वाले जंगली पंछियों में तब्दील हो जाती है जिनके पंखों के रंग कभी भी धुंधले नहीं होते, वे सपनों में नाचते हैं और वर्तमान पर अपनी चोंच से दस्तक देते रहते हैं...'कहानी के बारे में एक अन्य ब्लॉगर नीरा की टिप्पणी गौर करने लायक है - वर्तमान, अतीत, भविष्य और स्मृतियों की यह पेंटिग सच के करीब होते हुए भी बहुत सुंदर है... और कहानी की सबसे बड़ी खासियत यह है कि मुख्य पात्रों को सही और गलत के तराजू में तोलने की लिए पाठकों को मजबूर नहीं करती... मनुष्य होना कितना कठिन है? आपका यह प्रयास हर कसौटी पर खरा उतरा है...

समीर लाल http://udantashtari.blogspot.com/ पहले पायदान के ब्लॉगरों में से एक हैं। उनकी सबसे बड़ी ताकत है सहजता और बिना लाग-लपेट के सादगी से अपनी बात कह जाना. वे नियमित लिखते हैं और साथी ब्लॉगरों को पढ़ते भी हैं। हर महत्त्वपूर्ण ब्लॉग पर वे पहले पहुँचने वालों में से एक हैं। ऐसी ही एक पोस्ट मुझे वो याद आते है.. में उनका दार्शनिक अंदाज कमाल का हैं 'जब कनाडा आया था तो यहाँ के नियमों के हिसाब से कार चलाना पुन: सीखना पड़ा। सारे नियम जुदा भारत से। सड़क के उल्टी तरफ गाड़ी चलाना, स्टेयरिंग उल्टी तरफ, कोई क्लच नहीं, केवल ब्रेक और एक्सीलेटर। ऑटो गियर। एक बार लगा दिया और बस, फिर एक्सिलेटर और ब्रेक पर ध्यान दो। तेज रफ्तार और हर थोड़ी देर में ब्रेक मिरर में देखना कि पीछे से चला आ रहा बंदा कितनी दूर है या क्या एक्शन ले रहा है। जिसे आप पीछे छोड़ आये, उसका भी ध्यान रखो। पीछे छूटा और रात गई, बात गई वाली बात नहीं चलती। काश, मेरी जिन्दगी में भी ऐसा नियम बना होता, बैक व्यू मिरर में लगातार देखते रहने का। पलट कर देखता हूँ तो आगे ठोकर खाकर गिरने का खतरा बन जाता है। बैक व्यू मिरर का सिस्टम है नहीं। जो गुज़र गया वो गुज़र गया। याद में बसा लो। कभी याद करके आँसू बहा लो, कभी मुस्करा लो मगर देखने का जोखिम मत लो पलट कर। कितने लम्हें हैं जिन्हें देखने का मन करता है। फिर से जी लेने का मन करता है मगर हाय! ये जीवन। ऐसी सुविधा ही नहीं देता।

वरिष्ठ ब्लॉगर दिनेशराय द्विवेदी http://anvarat.blogspot.cpm पर हिन्दी नाटकों के संदर्भ में बहुत उपयोगी पोस्ट लगायी। वे लिखते हैं : हिन्दी जगत की साढिय नाटय संस्थाओं की सबसे बड़ी समस्या कोई है तो वह यह कि वर्तमान संदर्भो में प्रासंगिक नाटक कम लिखे जा रहे हैं। दूसरी भाषाओं से अनुवाद अपनी जगह पर है, पर अपनी भाषा में रचे गए नाटकों का दर्शकों के साथ जो सांस्कृतिक तादात्म्य बनता है वह अनुदित नाटकों का नहीं बनता इसलिए यह भी हो रहा है कि नाटय दल इम्प्रोवाइजेशन पद्धति से किसी एक थीम या आईडिया पर सामूहिक रूप से आलेख तैयार करते हैं और इस तरह नाटकों के अभाव की

की रचना प्रक्रिया है, जीवनानुभव, जीवन दर्शन और मानवीय संवेदनाओं के क्रिया व्यापार के बेहतर समुच्चय की संभावना वहाँ अधिक बनती है। प्रस्तुति के लिए तैयारियों के दौरान निर्देशक और कलाकारों का व्यवहार मंच की आवश्यकतानुसार उसे समृद्ध करता ही है, लेकिन यदि उन के पास 'थीम' या 'आईडिया' के बजाय नाटक-रचना उपलब्ध हो और वे उस पर काम शुरू करें तो यह उन के लिए भी अधिक सुविधाप्रद रहता है और बेहतर नाटय प्रस्तुति के लिए भी अधिक उपयुक्त रहता है। जाहिर है हिन्दी में वर्तमान सामाजिक यथार्थ पर आधारित नाटकों की जरूरत है।

जितेन्द्र चौधरी जो कुवैत में रहते हैं, ने अपने ब्लॉग http://www.jitu.info/merapanna/ ? =1293 पर 20 सितंबर 2009 को कमाल की पोस्ट लगाई। कलियुग में लंका सेतु निर्माण पूरी पोस्ट में भाषा में व्यंग्य की धार देखिये कि किस तरह एक पौराणिक संदर्भ का इस्तेमाल वर्तमान संदर्भ और आज के दौर की विसंगतियों को उजागर किया गया है : राम बड़े हैरान परेशान से इधर-उधर टहल रहे थे, समुन्द्र देवता भी कुछ कोआपरेट नहीं कर रहे थे, लक्ष्मण ने भाई को चिन्तावस्था में देखा तो पूछा ऐसा क्या मसला है बिग ब्रदर, व्हाई आर यू सो टेन्सड? राम ने दु:खी अवस्था में कहा, ये समुन्दर देव हमारी बात सुन ही नहीं रहे, लगता है इनको कुछ डोज देना ही पड़ेगा। इतना कहकर उन्होने अपने हाई टेक धनुष बाण को उठाया और गाइडेड तीर को समुन्दर की तरफ तान दिया। समुन्दर पानी पानी से धुँआ धुँआ हो गया, बहुत विचलित हो गया, उसने भी सुन रखा था, यदि बाण, धनुष से निकल गया तो फिर कुछ नहीं किया जा सकता, इसलिये मान्डली करने मे ही भलाई है। लेकिन क्या करे, एक तरफ रावण (सो काल्ड भाई!) और दूसरी तरफ कल के लड़के। इधर कुँआ और उधर खाई, पिटाई तो दोनों तरफ से ही होनी थी, लेकिन फिर भी समुन्दर ने बीच का रास्ता निकालते हुए राम को पुल बनाने का सुझाव दिया। ये सुझाव हज़ार बवालों की जड़ थी, मुझे आज तक समझ में नहीं आया, पुल बनाने के सुझाव को क्यों एक्सेप्ट कर लिया गया। बीच से समुन्दर को सुखाकर अपने आप रास्ता बनाने का सुझाव तुलसीदास को क्यों नहीं आया। राम को पुल बनाने में ट्रेप तो दिखा, लेकिन फिर भी मौके की नजाकत को देखते हुए एग्री कर गये। क्योंकि गाइडेड मिसाइल भी लार्ज प्रोडक्शन में नहीं थी, सब यहीं खतम करते तो रावण पर क्या बरसाते। अब परेशानी थी, आर्किटेक्ट की, नल और नील (क्या कहा, नील एन्ड निकी, अमां नही यार, वो तो बिस्तर से बाहर ही नहीं निकले! पिक्चर आयी भी और गयी भी , देख नहीं सके, सिर्फ पोस्टर से ही सन्तोष करना पड़ा। चलो जी सिनेमा या किसी टीवी चैनल पर अगले महीने देख लेंगे) आगे बढ़कर, राम को कन्विन्स कर दिए कि हम पुल बना लेंगे। लेकिन बोले कि मसला गम्भीर है इसलिये अलग-अलग सरकारी विभागों से नो आब्जेक्शन सर्टिफिकेट लेना पड़ेगा।

नामी कथाकार उदय प्रकाश ने अपने ब्लॉग http://uday-prakash.blogspot.com/209/09/blog-post_28.html पर एक आतंकी का पति और बुद्ध की मुस्कान (दो) अद्भुत पोस्ट लगायी। वे जिस जबरदस्त अंदाज के लिए जाने जाते है, वह एक बार फिर पढ़ने को मिला। पोस्ट की शुरूआत यों है : सत्ताओं ने एक ऐसा समय रचा है हमारे इर्द-गिर्द कि सारे दुस्वप्न और आकाँक्षाएं एक-एक कर सच होने लगती हैं। उस रोज़ जब पोखरण में परमाणु के धमाके हुए , उसके बाद के पंद्रह दिन पाकिस्तान में उथल-पुथल के थे। अगर सियासत के खिलाड़ी सरहद के इस पार अपनी हिंसा की ताकत का परीक्षण कर रहे थे तो सरहद के उस पार के खिलाड़ी इसे अपने लिए एक सुनहरा मौका मान रहे थे। निर्वासन में रह रहीं बेनज़ीर भुट्टो ने तुरन्त बयान दिया: "हिंदुस्तान के परमाणु केंद्रों को खत्म करने के लिए फौरन आकस्मिक हमला (preemptive action) कर देना चाहिए।"

बहरहाल, उस तपती मई की दोपहर, जब भिंड-मुरैना के बीहड़ में, सड़क से कुछ हट कर एक 'मारुति-800' खड़ी थी और एक पेड़ की वत्सल छाँह के नीचे, आग की लपटों वाली लू से बचते हुए, एक दर-ब-दर परिवार आलू-पूरी और अचार खा रहा था। उस दिन आलू और पूरी में अनोखा-अपूर्व स्वाद था। आम के अचार का एक टुकड़ा कुतरते ही, बचपन में, अतीत की धुंधली होती स्मृतियों में कहीं बहुत दूर छूट गयी अमराइयों का स्वाद और गंध देह के भीतर तक भर जाती थी...।
वहाँ से कुछ ही हट कर, झाड़ियों के पास एक खरगोश, जिसका नाम चकमक और एक पामरेनियन, जिसका नाम लाइका था, लुका-छिपी या चोर-सिपाही खेल रहे थे.... और जहाँ से कुछ सौ किलोमीटर उत्तर-पश्चिम में, दोनों के सरहद पर बमों के धमाके हो रहे थे... और वहाँ से कई समुद्र पार अमेरिका के किसी उत्तरी शहर में एक घबराहट और बेचैनी से भरे सेमिनार के खत्म हो जाने के बाद, एक डरी हुई सुंदर उदास लड़की, एक डरे हुए, चिंतित और परेशान खूबसूरत लड़के का हाथ थामे प्रेस कांफ्रेंस में कह रही थी : "हां, यह सच है कि हम एक दूसरे को बेइंतेहा प्यार करते हैं।..और आज की तारीख में इसे दुनिया के सामने ज़ाहिर करते हैं।..और हमारा यह प्यार बमों और विनाश के खिलाफ़ है...!" यह लड़की और यह लड़का उन दो देशों के थे, जिन्हें राजनीति ने एक ही शरीर को चीर कर अलग किया था। जैसे दो गुर्दो, आँखों या कलेजों के बीच एक सरहद की कांटेदार दीवार खड़ी कर दी गयी हो। यह लड़की और वह लड़का उन दो अलग-अलग धर्मो के थे, जिन्हें एक-दूसरे का दुश्मन और खून का प्यासा बनाने में दोनों तरफ़ की सियासत और मीडिया और कार्पोरेट कंम्पनियां दिन रात लगी हुईं थीं।
हिन्दी ब्लॉग पर किस कदर गंभीर कविता रची जा रही है, इसकी बानगी नंदनी महाजन की कविता http://mahajann.blogspot.com/2009/09/blog-post_05.html को पढ़कर

लगाया जा सकता है। स्कूल जाती बच्ची की कविता । जब भी मैं स्कूल हूँ जाती, गली की नुक्कड़ पर, गेहूँ , चावल वाला बनिया, तोंद बाहर निकली है, कांधे पर गमछा रखता है, मुझको क्यों देखा करता है, आगे उन दो दूकानों पर, ताले क्यों लटके रहते हैं, वो काला डुबला लड़का, हेन्डल और टायर को क्यों धोता, पीले रंग की पुड़िया से, अपने मुँह में क्या रखा करता है, मुझको क्यों देखा करता है, खिचड़ी बालों वाला बूढ़ा सिन्धी, सूखे प्याज़ झटकता है सुबह मे, टमाटरों को पानी में धोता, 'राजकुमारी स्कूल जाती है, ' ऐसा क्यों पूछा करता है, मुझको क्यों देखा करता है, सड़क पार चश्में वाले के पिछवाड़े में, उस अन्धेरी कोठरिया सी, खड्डी-खड्डी बदबू वाली, भीड़ भरी दुकान के बाहर, एक उलझे बालों वाला हरदम, आसमान में ताका करता है, मुझको क्यों देखा करता है, मोटा तगड़ा साबू जैसा, पानी पिलाने वाला चपरासी, छुट्टी होने पर, स्कूल के दरवाजे से सटा करता है, चलो बच्चों... चलो बच्चों,.. सबकी पीठ पर हाथ धरा करता है, मुझको क्यों देखा करता है , माँ कहती, बेटी ये दुनिया उल्टी है, जो होता है वो दिखता नहीं है, जो दिखता है वो होता नहीं है, बनिया, कबाड़ी, सेठ, नौकरों, सिन्धी, नाई, धोबी और हम सबमें, जितना देवता उतना ही शैतान बसा होता है, पहचान जो लोगी तुम इनको , तो फिर कोई लाख जो देखे तुमको क्या होता है,

कविता की बात हो चर्चित कवि कुमार अंजुब याद न आए, ये हो नहीं सकता। कुछ दिनों पहले उन्होंने अपने ब्लॉग http://kumaranbuj.blogspot.com/2009/07/blog-post.html पर रोमांचित करने वाली कविता लगाई। खाना बनाती स्त्रियाँ कविता का आखिरी छन्द यों था :

उन्हें सुबह की नींद में खाना बनाना पड़ा, फिर दोपहर की नींद में, फिर रात की नींद में, और फिर नींद की नींद में, उन्होंने खाना बनाया, उनके तलुओं में जमा हो गया है खून, झुकने लगी है रीढ़, घुटनों पर दस्तक दे रहा है गठिया, आपने शायद ध्यान नहीं दिया है, पिछले कई दिनों से उन्होंने बैठकर खाना बनाना शुरू कर दिया है, हालाँकि उनसे ठीक तरह से बैठा भी नहीं जाता है,

****

ठोकरें केवल धूल ही उड़ाती हैं , धरती से फ़सलें नहीं उगातीं। टैगोर

अमित कुमार सिंह

कैनेडा का सर्वश्रेष्ठ हिन्दी साप्ताहिक • हर सप्ताह 30,000 पाठक

हिन्दी Abroad

www.hindiabroad.com

हिन्दी Abroad

Published by
HINDI ABROAD MEDIA INC.

Chief Editor
Ravi. R. Pandey
(Media Critic, Ex Sub Editor - Times Of India Group, New Delhi)

Editor
Jayashree

News Editor
Firoz Khan

Reporter
Rahul, Shahida

New Delhi Bureau
Rangnath Pandey
(Ex Chief Sub Editor - Navbharat Times, New Delhi)
Shiela Sharma,
Vijay Kumar

Designing
AK Innovations Inc.
416-892-1538

7071 Airport Road, Suite 204A
Mississauga, ON
Canada. L4T 4J3
Tel: 905-673-9929
Fax: 905-673-9114
E-mail: hindiabroad@gmail.com
editor@hindiabroad.com
Web: www.hindiabroad.com

Disclaimer: The opinions expressed in Hindi Aborad may not be those of the publisher. Contents of this publication are covered by copyright and offenders will be prosecuted under the law.

अंधकार

किरन सिंह (भारत)

गगनचुम्बी इमारतें,
चारों तरफ जगमग
प्रकाश है।
पर मन के भीतर
तुम देखो मानव
कितना अंधकार है।

दिन की रोशनी हो
चाहे हो सूर्य का
प्रकाश,
मन के दीप
जब तक न जले।
ये सब है अंधकार।

प्रज्वलित कर
दीप अन्तर्मन का
कलुषित विचार,
को त्यागो,
मन ज्योति से
रोशन कर 'किरन'
संसार से अंधकार
तुम मिटा दो।
****

बर्फ के कारागार से

जगदीशचंद्र शारदा (कैनेडा)

बर्फों के इस श्वेत जेल में
फँसे हुये तूफान मेल में
कैसे अपना दिल बहलाएँ?
कैसे बाहर आएँ जाएँ ?
कोई तो हमको समझाए
बूढ़ेपन का लाभ उठाएँ
कभी कभी तो ऐसा लगता है
लौट देश हम वापस जाएँ
भैय्या! तुम्हीं मुझे समझाओ
कोई रास्ता हमें बताओ
एकाकीपन का इलाज क्या?
वैद्य , चिकित्सक करें काज क्या?
सुख की साँस तभी आयेगी
मौत बर्फ की जब आयेगी
फिर मुस्कानें महक उठेंगी
गाती चिड़िया चहक उठेगी

ग़ज़ल

चाँद शुक्ला 'हदियाबादी', (डेनमार्क)

धुँधली धुँधली किसकी है तहरीर है मेरी
एक अधूरे ख़ाब की सी ताबीर है मेरी

लम्हें उनके साथ गुज़ारे थे जो मैंने
भूली बिसरी यादें ही जागीर है मेरी

उनसे मिलना मिल के बिछुड़ना आहें भरना
आईना तकता हूँ सूरत दिलग़ीर है मेरी

मुर्झा गये हैं फूल मेरे घर के गमलों में
सूखे पत्तों की मानिंद तकदीर है मेरी

यादों की दीवारों पर हैं खून के छींटे
जैसे फूटी किस्मत की नक्सीर है मेरी

तेरे रूप से जगमग चमके मेरी दुनिया
अँधियारी राहों में तू तनवीर है मेरी

तेरी माँग में चाँद सितारें रहें सलामत
इसमें रौशन ख़ाबों की ताबीर है मेरी
****

हिंदी दिवस और महाकवि घासलेट

संदीप त्यागी (कैनेडा)

बिना हिचक अविरल प्रवाह से लगातार पढ़ते जाते हैं,
घंटों ही कुछ का कुछ गुरुघंटाल अरे! धढ़ते जाते हैं।
अड़ जाते हैं लड़ जाते हैं, सब पर भारी पड़ जाते हैं,
वंशी नहीं वंश वादन सा कर्णकुहर सुन भन्नाते हैं।
क्योंकि विश्रुत महाकवि हैं अपनी ही अपनी गाते हैं,
घटिया से घटियातम कविता पुनः पुनः अरे दोहराते हैं।
हिंदी मंचों पर जब कविश्री घासलेट जी चढ़ जाते हैं ।।1।।

टूट सभी सीमायें जाती घड़ियाँ घूर घूर रह जातीं,
आँखें शर्म लिहाज़ छोड़ केवल संकेतों में चिल्लातीं।
आयोजक हैरान परेशाँ हाल देख करके जन जन का ,
संयोजक को संप्रेषित कर, देते जिम्मा संयोजन का।
मंचपटल पर संयोजक भी खिन्नमना पर मुसकाते हैं,
हिम्मत कर ध्वनिविस्तारक की तरफ़ हाथ औ लपकाते हैं।
ज्योंहि त्योंहि उनको दर्शक दीर्घा में लुढ़का पाते हैं।।2।।

वाह निकलना दूर किसी के मुख से हाय तलक ना फूटे,
नीरव स्तब्ध हरेक श्रोता कवि मूक बधिर बन कर रस लूटे।
बाहुबली भी दबा पूँछ खर्राटों में खोने लगते हैं,

पूरे हफ़्ते की थकान वश बस सब ही सोने लगते हैं।
यदि भोजन का समुचित पूर्वप्रबंध सभासद् पा जाते हैं,
मुख्यातिथि अध्यक्ष सहित सबको ही चकमा दे जाते हैं।
औ केवल कवि घासलेट श्रोता कवियों पर छा जाते हैं।।3।।

केवल कविता ही हिन्दी कवि सम्मेलन में पढ़ते होंगे,
हमने सोचा क्योंकर कोई गद्य विधा में पढ़ते होंगे।
लेकिन गद्यविधा के हमें मिले विविध पद्यात्मक मोड़,
नाटक, निबन्ध , कहानी क्या सीक्वल उपन्यास की होड़।
ऐसी लम्बी लम्बी रबड़ छंद में थीं कविता स्वच्छंद,
गद्यात्मक शैली में सस्वर सुन कर कान हुए बस बंद।
असली श्रोता ऐसे कैसे हिंदी कवि से बच पाते हैं।।4।।

बरबस ही मन हिंदी दिवस पर हिन्दी का रोने लगता है,
प्रेमचंद, द्विवेदी युगीन सपनों में बस खोने लगता है ।
भारतेन्दु, नानक,कबीर, तुलसी, रहीम की पौध अमर,
सांकृत्यायन,पद्मसिंह,आचार्य शुक्ल, हरिऔध अमर।
कितने अच्छे साधक मेरे पंत निराला से बहुतेरे,
गुप्त-बंधु,जय-शंकर,दिनकर से कैसे थे चतुर चितेरे।।
बच्चन,माखन,महादेवी के याद काव्य सदगुण आते हैं।।5।।
****

अहिल्या

तेजेन्द्र शर्मा (यू.के.)

जड़ पड़ी है वह
दशकों से सदियों से
जड़
नहीं कर सकती बात
भावनाएं कुन्द हैं
बस पड़ी है
जड़ की जड़ ।

मौजूद है धड़कन
चलती है साँस
खुली हैं आँखें
बंद हो जाती हैं
चाहती है बात करना
मगर पड़ी है
जड़... बस जड़।

आँखों में है प्रतीक्षा
इंतज़ार उसका
जो आए, और आकर
छू ले, और अपनी
छुअन से, एक बार फिर
करदे पैदा वही उष्मा
जो उसमें मौजूद थी
उस समय भी
जब वह नहीं थी
जड़।

देखते हैं उसे
वृक्ष, पौधे, पत्थर
निहारते हैं उसे
पक्षी और जानवर
लगाते हैं उसे आवाज़
चाहते हैं वह बात करे
मगर वह बस रहती है पड़ी
जड़ की जड़ ।

जंगल
देखता था उसे कल भी
और आज
मुँह में ज़बान है
मगर नहीं आवाज़
व्यर्थ हो गया सारा यौवन
रही करती प्रतीक्षा
आयेगा कोई, होगी मुक्ति उसकी
और नहीं रहेगी वह - जड़ ।

आज्ञा है पति की
जा तू जड़ हो जा
नपुंसक पति
जुल्म से डरा पति
जुल्मी के साथ खड़ा पति
दंड ज़रूर देता है
निर्दोष को, निरपराध को
और हो जाती है वो - जड़।

न करे बात कोई
और न सुने
बस रहे जानवरों के बीच
पेड़ों, पौधों और चट्टानों के बीच
यही है इसकी सज़ा
जुर्म वही है
जो इसने नहीं किया
उस जुर्म का ही है दण्ड
जा - जड़ हो जा।

ऐसे में, एक युवा स्पर्श –
एक बार फिर दौड़ा
शिराओं में गर्म ख़ून
युवा घोषणा की दहाड़
जिसने सुनी थर्रा गया
ज़ालिम चुप, पापी घबरा गया
मेरी साँसें मुझे लौटाई जाएँगी

मुझे फिर से जीने का मिलेगा हक
अब मैं नहीं रहूँगी - जड़ ।

काल का चक्र नहीं रुका
उसे भला क्या लेना
जड़ या चेतन से
निरंतर चलायमान है
चुके हुए, थके, निढाल
नामों को मिटना होगा
राह देनी होगी
युवा स्पर्श को
तभी तो जड़ चेतना होगा।
****

माटी मेरे वतन की

यशपाल लाम्बा 'साफिर समदर्शी' (कैनेडा)

हर पल महसूस करता हूँ मैं
अपने वतन की माटी
अपने जान– ओ– जिगर में।

गोद में खिलाया
और खिलाया हमें
चलना सिखाया हमें
दौड़ना सिखाया हमें
दौड़ना तो दौड़ना
उड़ना भी सिखाया हमें।

सींच रही है हमारी
और हमारे वतन की जड़ें
आज तक अपने उदर से
मेरे वतन की माटी।

हम प्रवासी भी निभायेंगे
अपनी माटी के उसूल
"सर्वे भवन्तु सुखिनः"
जब भी माँगेंगे
सिर्फ अपना नहीं
सारे जग का सुख मांगेंगे
हम डालर औ यूरो के
नशे में चूर होकर
होशो हवास खोयंगे नहीं
खुद को भूलेंगे नहीं
हम ....
होश में जियेंगे
'अहिंसा परमं धर्मः'
जियेंगे हम
एक हिंसा रहित जीवन
न अपने आप से हिंसा
न अपने परिवार से

न किसी और से
और न ही वातावरण से
शारीरिक हिंसा
और न ही मनोवैज्ञानिक ।

" वसुधैव कुटुम्बकम्
मेरे वतन की माटी
सारे जहाँ की माटी में मिलकर
सारे विश्व को एक कुटुम्ब
हाँ, एक कुटुम्ब बनायेगी
और अमन सुलह खुशहाली का
परचम बनकर लहरायेगी
विश्व के कण कण में,
माटी मेरे वतन की !
****

उन्मुक्त

भगवत शरण श्रीवास्तव (शरण)
(कैनेडा)

उन्मुक्त हो पवन बहे
संयुक्त हो वतन रहे
स्वदेश वासियों मेरे
निर्भीक हो भवन रहे ।

जो आंधियां आयें कभी
उनका हम दलन करें
न दीप बुझ सके कभी
हम यही यतन करें ।

पतझड़ न आये देश में
खिलता सदा चमन रहे
वसुन्धरा में शान्ति हो
हो प्रेम न जलन रहे ।

आतंक करने आये जो
उसका सभी दमन करें
हिमगिरि किरीट है मेरा
कश्मीर हम वतन रहे ।

युग युग से ये हमारा है
औ सदा हमदम रहे
ये भव्य भाल देश का
इसमें सदा अमन रहे ।

धरती पे ये तो स्वर्ग है
हर दिल का ये सनम रहे
वीरों का ये संदेश है
हर खून में उफन रहे ।

ये वादियाँ ये झाँकियाँ
ये सब सदा रौशन रहें
फैराये गौरव से तिरंगा
उत्तुंग हो गगन रहे ।

कारगिल इसका साक्षी
वीरों को हम नमन करें
गद्दार है पड़ोस में
इन पर कड़े नयन रहें ।

पंथ नया बनाऊँगी

शशि पाधा (अमेरिका)

एकाकी चलती जाऊँगी।
रोकेंगी बाधाएं फिर भी
बांधेंगी विपदाएं फिर भी
पंथ नया बनाऊँगी
एकाकी चलती जाऊँगी ।

संकल्पों के सेतु होंगे
निष्ठा दिशा दिखाएगी
साहस होगा पथ प्रदर्शक
आशा ज्योत जलाएगी

विश्वासों के पँख लगा मैं
नभ में उड़ती जाऊँगी ।
अपना पंथ बनाऊँगी ।

संग चलेंगी सुधियां 'कल' की
और 'आज' का धैर्य चलेगा
मंज़िल कितनी दूर भी होगी
रस्ता कितना दुर्गम होगा

वायु से ले वेग की दीक्षा
शून्य भेदती जाऊँगी ।
नभ में पंथ बनाऊँगी ।

काले मेघा घिर-घिर आएं
सूर्य किरण बन चलना होगा
बीहड़ जंगल राह भुलाएं
ध्रुव तारा बन हँसना होगा ।

उल्काओं के दीप जला कर
जीवन पर्व मनाऊँगी ।
एकाकी चलती जाऊँगी ।

****

यह किसकी चिता है?

डॉ. शाहनाज़ अब्बास नक़वी (भारत)

सर्दी पूस की ठिठुर रही थी
दो सहमे, सिसकते, अधनंगे, अधभूखे
हड्डियाँ ओढ़े , मानव सरीखे
बढ़ चले शमशान की ओर
सोचकर शायद कोई लाश जल रही हो,
मरे शरीर की गर्मी से
अपनी ज़िन्दा लाशों को सेकेंगे
पूस की ठिठुरती एक रात तो काटेंगे।

यूँ तो शमशान घाट सुनसान था ,
पर दूर तीन लाशें चटख़ रही थीं,
अधनंगे मुर्दों में जान पड़ गयी
मूंदी-मूंदी आँखों की नींद उड़ गयी
बाँछें फूल की तरह खिल गयीं
खुशी से एक दूसरे की ओर तका सहमी नज़रों से
वे भाग चले लपटें उगलती लाशों की ओर .....

पहली लाश के किनारे बैठे, पास गये और पास गये
पर गर्मी कहीं ग़ायब थी ,
लपटें बरफ़ जैसी ठंडी, सबकी दोस्त अग्नि
दुश्मनी निभा रही थी,
पूस की ठंडक बढ़ा रही थी,
पास बैठे जलावक से अधनंगों ने प्रश्न किया –
" क्या हुआ इस शव को, था यह कौन"?
उत्तर दिया जलावक ने यथाशक्ति,
" भाई, यहाँ का था एक धनवान व्यक्ति"
ग़रीब और सिसक गये ...
दूसरे शव के किनारे बैठने के ख़ातिर वहाँ से खिसक गये ।

दूसरा शव चटख़ता था अधिक
चिंगारियाँ चारों ओर फैलती थीं,
लपटें कम थीं, भड़कता था अधिक।
ग़रीब कभी पास जाते थे, कभी दूर भाग जाते थे
दोनों ने घबराकर जलावक से पूछा –
"था यह आख़िर कौन?"
जलावक ने उत्तर दिया, " अनभिज्ञ,
मृतक यहाँ का था एक राजनैतिक"
इससे पहले वे और पूछते
शव बुझ गया
अपने आप से जूझते-जूझते ।

तीसरा शव ज़रा कोने में था
जैसे गुरुजी का प्रसाद दोने में था ,
जैसे-जैसे वे पहुँचे शव के पास
शव की लपटें बढ़ती गयीं
जैसे हो प्यासे की प्यास
पास बैठे ही थे कि आ गया पसीना
दोनों अधनंगों ने पूस की रात में
खोल दिया अपना– अपना सीना
लाल-पीली लपटें शव को लपेटे थीं ,
शव का सीना धधक रहा था
हर अंग शव का फड़क रहा था
रोशनी इतनी थी मानो के हो रवि,
दोनों ने खुश होकर जलावक से पूछा –
" था यह कौन?"
जलावक ने उत्तर दिया

" मृतक था यहाँ का एक कवि ।"

ग़रीबों ने हाथ तापने को फैला दिये
पैर ढीले कर पसरा दिये
मस्ती भरी अधनंगी अंगड़ाई ली
ठिठुरती रात अब बीत जायेगी

कवि है रात भर जलेगा
भगवान है मेहरबान
कल फिर कोई कवि मरेगा ।
****

ग़ज़ल

विज्ञान व्रत (भारत)

जुगनू ही दीवाने निकले
अँधियारा झुठलाने निकले

ऊँचे लोग सयाने निकले
महलों में तहख़ाने निकले

वो तो सबकी ही ज़द में था
किसके ठीक निशाने निकले

आहों का अंदाज़ नया था
लेकिन ज़ख़्म पुराने निकले

जिनको पकड़ा हाथ समझकर
वो केवल दस्ताने निकले
****

मुलाकात नहीं होती

नीना पाल (यू. के.)

है उनको शिकायत कि मुलाकात नहीं होती
गुफ़्तगू करके भी कभी बात नहीं होती

आलम क्यों पूछते हो बिन बुलाई बरखा का
गर्जने वालों से कभी बरसात नहीं होती

ना था यकीं उनको भी उल्फत है किसी से
हर एक बात उनकी ख़राफात नहीं होती

हर वक्त मय्यसर जिसे निगाह – ऐ –नाज़ से
मय से उसकी गरज़ कभी नशात नहीं होती

चमन भरा गुलों से मगर सबकी नसरीं जुदा
बदलती रुतों से उनकी इस्बात नहीं होती

इज़हार –ऐ – मोहब्बत तो नज़र आये आँखों में
अल्फ़ाज़ों से ऐहसास– ऐ–जज़बात नहीं होती

यूं तो सजदे में हरदम हाथ उठें नीना के
तुम बिन मुकम्मल उसकी इबादात नहीं होती
****

पानी पानी है

कृष्ण कुमार (यू. के.)

हनुमान सा
जग के साकी
मन ने आज सखा माना है
आती – जाती हर सांसों ने
क्या – क्या अंकित ? पहचाना है
यह केवल संयोग नहीं है
पूर्व जनम का यह लेखा है
जो भविष्य का घटक बनेगा
दिव्य दृष्टि ने यह देखा है।
ऊहापोह में जीवन फंसता
फिर जा वह दलदल में धंसता
आ कर साकी डोर सम्भालो
औ भविष्य की ओर बचा लो
जग के ओ पानी वाले क्यों
यह जीवन
पानी – पानी है ।
****

पायल की झनकार बसा दो

नरेन्द्र श्रोवर (यू.के.)

तुम हँस –हँस पिया दीप जला दो,
राह अँधेरी आज किसी की,
नीरस गीतों के आँगन में,
पायल की झनकार बसा दो !

बन बिरहन सावन की बदली,
छम –छम नीर बहाती पगली,
दूर है मंज़िल आज किसी की,
तुम साथी बन राह दिखा दो !

हर पग पर उठते हैं तूफ़ाँ,
हर पग पर पावस की बदली,
शशि से लेकर ज्योति स्वयं तुम,
बुझते दीपक आज जला दो!

शलभ बने दीपक के साथी,
लेकिन सूनी माँग किसी की,
तुम बनकर सिंदूर प्रीत का,
माँग किसी की आज सजा दो !

■ पाती

सुधा जी,
पूरा अंक पढ़ गया। अपनी धरती से इतनी दूर बैठ कर जो काम आप लोग कर रहे हैं, वह बहुत महत्त्वपूर्ण है। झारखंड में रहते हुए फादर कामिल बुल्के के काम को जानने-देखने का अवसर मिला था। पिछले साल जब बंगाल गया, कर्सियांग में, तो मित्रों ने बताया कि यहाँ भी फादर ने अपना वक्त गुजारा है। आज फिर आपकी पत्रिका को पढ़ते हुए इन सारी स्मृतियों से गुज़र गया। दिनेश्वर प्रसाद जी ने बहुत विस्तार से लिखा है। दूसरी सामग्री भी महत्वपूर्ण है। खास तौर पर अन्नपूर्णा जी के संस्मरण का उल्लेख करना चाहूँ-गा। कामिल बुल्के जी की भी सामग्री संग्रह योग्य है। इसके लिंक दूसरे मित्रों को भी भिजवा रहा हूँ।
सादर ,
आलोक पुतुल (भारत)
http://raviwar.com

****

आदरणीय इला जी!

"हिन्दी चेतना" का कामिल बुल्के पर केन्द्रित अंक देख लिया है। अभी पूरा पढ़ा नहीं है। आपकी प्रेरणा और सहयोग से निकला यह अंक बेहद महत्त्वपूर्ण है। क्या इसमें आपके द्वारा जुटाई गई सामग्री का उपयोग हम गद्यकोश में कर सकते हैं। कामिल बुल्के पर तो मैं तब से फिदा हूँ, जब मैं पन्द्रह-सोलह साल का था और उनका शब्दकोश मुझे एक वाद-विवाद प्रतियोगिता में उपहार में मिला था। उस शब्दकोश के कारण ही अंग्रेजी के बहुत से नए-नए शब्द सीखे और उसके सहारे ही कभी अनुवाद करना शुरू किया था।
सादर ,
अनिल जनविजय (रूस)

****

'हिन्दी चेतना' में आप लोगों ने मेरे उपन्यासों 'रमला बहू' और 'खुदीराम बोस' के बहुत बड़े कवर छापे हैं। आभार स्वीकारें।
सादर,
रूप सिंह चन्देल (भारत)

प्रिय सुधाजी ,

जुलाई " हिंदी चेतना-डॉ. कामिल बुल्के विशेषांक" हासिल हुआ। उम्मीद की शिला पर खड़ी मेरी सोच जाने किन ऊँचाईयों पर सफर करने लगी, कामिल जी की अनुभूतिओं के विस्तार के दायिरे में विचरती रही। अंक की तमाम सामग्री, पाठनीय एवं रुचिकर है। चित्रकला- कार्यशाला बहुत ही उम्दा लगी।

मेरी शुभकामनाएँ,
देवी नागरानी (अमेरिका)

****

फादर कॉमिल बुल्के पर आधारित 'हिंदी चेतना' का जुलाई अंक बहुत अच्छा लगा । उनके व्यक्तित्व, कृतित्त्व और उपलब्धियों पर आपने बहुत सराहनीय सामग्री जुटाई है ।

देवमणि पाण्डेय, (भारत)

****

प्रिय इला जी,
नमस्कार ।
कनाडा की 'हिन्दी चेतना' नामक पत्रिका बहुत पसंद आयी, विशेषकर कामिल बुल्के पर निकाला गया विशेषांक प्रशंसनीय है। एक विदेशी होने के बावजूद उन्होंने हिंदी की जो सेवा की वह प्रशंसनीय तथा अनुकरणीय है । ऑस्ट्रेलिया के हिंदी विद्यार्थी, उनके द्वारा संकलित शब्दकोश का प्रयोग करते हैं
कनाडा की हिंदी प्रचारिणी सभा बहुत अच्छा कार्य कर रही है , उन्हें हिंदी के प्रचार-प्रसार के उद्देश्य में सफलता मिले, मेरी यही कामना है।
शुभ कामनाओं सहित,
-दिनेश श्रीवास्तव (सिडनी, आस्ट्रेलिया)

****
प्रिय संपादक जी,

'हिंदी-चेतना' का फादर कामिल बुल्के विशेषांक पढ़कर अत्यंत हर्ष हुआ। फादर कामिल बुल्के का नाम पढ़ने से मुझे वह दिन याद हो आया ,जब मुझे महानदी कोलफील्ड्स लिमिटेड द्वारा आयोजित "राजभाषा-प्रतियोगिता' में प्रथम स्थान प्राप्त करने पर पारितोषिक स्वरूप हिंदी साहित्य की कुछ महत्त्वपूर्ण पुस्तकों के साथ फादर कामिल बुल्के का इंग्लिश -हिंदी शब्द-कोष भी मिला था। उस समय तक फादर साहब के बारे में विशेष जानकारी नहीं थी। केवल इतना ही जानता था कि वे राँची के किसी प्रतिष्ठित

कॉलेज में हिंदी भाषा के विभागाध्यक्ष थे एवं उन्होंने हिंदी भाषा के उत्थान के लिए जीवन भर प्रयास किया। आज "हिंदी चेतना" का यह अंक पढ़कर उनकी "जीवन रेखाओं" के बारे में विशिष्ट जानकारी मिली। पत्रिका में डॉ. दिनेश्वर प्रसाद के आलेख "डॉ. कामिल बुल्के जीवन रेखाएं" तथा डॉ. पूर्णिमा केडिया "अन्नपूर्णा" के संस्मरण "बीसवीं शताब्दी का ऋषि" पढ़कर हिंदी के धर्मयोद्धा और संत साहित्यकार के महान व्यक्तित्व के सम्पूर्ण भारतीयत्व तथा तुलसीदास की रामचरित मानस के प्रति अगाध आस्था देखकर उनके प्रति मन में श्रद्धा-सुमन एवं शत-शत नमन करने की उत्कट इच्छा पैदा हो गई । इसके अलावा डॉ. कामिल बुल्के के निबंध "रामकथा मेरे शोध का विषय क्यों" ? एवं "एक ईसाई की आस्था", हिन्दी -प्रेम और तुलसी-भक्ति" पढ़ने से इस बात का एहसास हुआ कि फादर साहब सही अर्थों में भारतीय थे ,भले ही उनका जन्म बेल्जियम में हुआ हो। बेल्जियम में जहाँ फ्रेंच भाषा का बोलबाला था यद्धपि वहाँ की मूल भाषा फ्लेमिश थी , ठीक उसी प्रकार हिन्दुस्तान में अंग्रेजी का वर्चस्व था तथा हिन्दी उपेक्षित थी। उस समय में हिन्दी भाषा के उत्थान के लिए अपने आपको एक उदहारण के रूप में प्रस्तुत किया। मैं इला जी को तहे दिल से धन्यवाद ज्ञापन करना चाहता हूँ , जिन्होंने हिंदी चेतना का लिंक भेजकर इस पत्रिका को पढ़ने के लिए प्रेरित किया।
साभार ,
दिनेश कुमार माली (भारत)

****
मान्यवर सम्पादक जी,
सादर प्रणाम ।

न्यू जर्सी में, मैं अपने पुत्र के पास आया हुआ हूँ । विदेश में हिन्दी भाषा के प्रचार प्रसार में लगे सभी प्रवासी भारतियों के प्रय-ाास स्तुत्य हैं । आप सभी बन्धु न केवल हिन्दी की सेवा कर रहे अपितु हिन्दी के माध्यम से विश्व में मानवीय मूल्यों की स्थापना के लिये भी प्रयासरत है ।
धन्यवाद,
लक्ष्मी नारायण गुप्त (अमेरिका)
****

सुधा जी ,
नमस्ते।
आज "हिंदी चेतना " पत्रिका की दो प्रतियाँ मिली। बहुत – बहुत आभार अपनी कहानी " जनम जनम के फेरे " भी दे-खी -- सारी सामग्री बहुत बढ़िया है आपके प्रयास सराहनी-य और एक नयी दिशा में इतने सजग हैं कि हिंदी भाषा के उज्ज्वल भविष्य के प्रति आशा बलवती हो रही है।
मेरी ढेरों शुभकामनाएँ स्वीकार कीजिये ।
लावण्या शाह (अमेरिका)

प्रिय सुधाजी,
"हिन्दी चेतना" का नया अंक मिला, जिससे कामिल बुल्के के बारे में वह जानकारी भी मिली , जिससे मैं नावाक़िफ था । इससे पूर्व के अंक भी मैनें पढ़े थे। विदेश में रह कर हिन्दी की इतनी सुन्दर पत्रिका निकालने के लिए आप और आपके सहयोगी साधुवाद के पात्र हैं। ईश्वर आपको बल और शक्ति दे, ताकि आप लोग इसी प्रकार हिन्दी भाषा की सेवा करते रहें।
भवदीय,
-श्रीनिवास जोशी (भारत)

****
सुधा जी,
"हिन्दी चेतना" का डॉ. कामिल बुल्के विशेषांक मिला धन्यवाद।
यदि सीधे सादे शब्दों में कहूँ तो वस्तुस्थिति यह है कि इस विशेषांक को पढ़ने से पहले मेरे लिये कामिल बुल्के का एक ही अर्थ था– 'अंग्रेज़ी – हिन्दी कोश'। इस विशेषांक से गुज़र जाने के बाद पता चला कि मैं किस महान विभूति से आज तक अप-रिचित रहा। डॉ. दिनेश्वर प्रसाद का लेख जीवन रेखाएं सीधे सरल ढंग से फ़ादर कामिल बुल्के के जीवन से परिचित करवाता है। फ़ादर बुल्के के अखिल भारतीय साहित्यकार सम्मेलन, कानपुर एवं जीवाजी विश्वविद्यालय में दिये गये भाषणों से भी पहचान हुई। इला प्रसाद जी ने अपने सधे हुए दो शब्दों में यह सही कहा है कि लेखों को दोहराया न जाए। वे अपने प्रयास में सफल रही हैं। उन्हें भी इस अंक के लिये साधुवा। आत्माराम शर्मा एवं मृदुला प्रसाद के लेख भी अपने अपने ढंग से बात प्रेषित करते हैं। विशेषांक में आपके नियमित स्तम्भ भी सूचनात्मक एवं मनोरंजक रहे। आपकी पूरी टीम को इस विशेषांक के लिये बधाई।
तेजेन्द्र शर्मा (यू. के.)
****
आदरणीय त्रिपाठी जी एवं सुधा जी !
डॉ. कामिल बुल्के पर विशेषांक निकाल कर आपने हम जैसे प्यासे प्रवासियों पर बहुत बड़ा उपकार किया है। बहुत सी बातें , बहुत से साहित्यकारों के परिचय उनकी उपलब्धियां और प्रशस्तियों से हम दूर बैठे वंचित ही रह जाते हैं । डॉ. कामिल बुल्के का मैने केवल नाम ही सुना था। आपने इतनी सारी जान-कारी सम्मिलत रूप से संचित कर के बड़े जीवट का काम किया है। फादर कामिल बुल्के की हिन्दी और हिन्दुस्तानी के प्रति यह अनूठी आस्था देखकर आश्चर्य होता है । हिन्दी इतिहास में उनके अंग्रेजी के शब्द कोश का तो जबाब नहीं । वह अपने आप में एक अद्वितीय उपलब्धि है। एक बात कहूँगी , कहीं –कहीं उपलब्ध सामग्री के सीमित स्त्रोत के कारण एक–रसता सी आई है, जो खटकती है। रेगिस्तान में रहकर हिन्दी की सुखद –सरिता को प्रवाहित किये रखना – अपने आप में एक महायज्ञ है।
साधुवाद!
शुभकामनाओं एवं स्नेह सहित,
सुदर्शन प्रियदर्शिनी (अमेरिका)

प्रिय सुधा जी,
व्यर्थ की चापलूसी मेरा स्वभाव नहीं है। न देश से हज़ारों मील दूर बैठे 'हिन्दी की सेवा' जैसे नारों में मेरा विश्वास है। इसीलिए मैं किसी भी 'प्रवास' में प्रकाशित होने वाली पत्रिका पर टिप्पणी नहीं करता। किन्तु 'हिन्दी चेतना' का श्रद्धेय कामिल बुल्के के जीवन पर आधारित विशेषांक मेरी आत्मा को तृप्त कर गया , हृदय में आनन्द का अतिरेक हुआ और बुद्धि को दे गया ज्ञान का अमृत। वैश्विक आत्मा , उदार चेतना , धर्म –समन्वयी , शुद्ध मानव और मनीषी बाबा बुल्के के प्रति श्रद्धाँजलि – सुमनों का यह गुच्छा साहित्य के प्रांगण को अपूर्व दान है। निश्चय ही अत्यन्त परिश्रम और श्रद्धा से सारस्वत यज्ञ में दिया गया अतिविशिष्ट अर्घ्य। मैं इस साधना के लिए नतमस्तक हूँ। बाबा बुल्के शतप्रतिशत हिन्दी और भारत के प्रति समर्पित थे। मेरी कामना है कि आप इस संग्रहणीय अंक को तनिक और विस्तार देकर –स्व. शंकरदयाल सक्सेना आदि की श्रद्धांजलियों को जोड़कर –पुस्तक का आकार दें।
साधुवाद और बधाई के रूप में ये चार पंक्तियाँ –
मूर्ति – मंदिर – अर्घ्य – पूजा –मंत्र – श्रुति अच्छे लगे
ऋषि –चरित –गुणगान प्रेरक वचन अति अच्छे लगे
राम–ईसा–भक्त जो, वन्दन भरे शुचितम सुमन
उस मनुजता –एकता –अवतार –प्रति अच्छे लगे।
शुभकामनाओं सहित,
वेदप्रकाश 'वटुक'
बर्कले, कैलिफोर्निया

****

प्रिय त्रिपाठी जी,
सप्रेम नमस्कार।
"हिन्दी –चेतना" का डॉ. कामिल बुल्के विशेषांक देखकर बहुत अच्छा लगा । इतना सुन्दर तथा साहित्य सामग्री से भरा अंक प्रकाशित करने के लिए स्वयं आप के सभी सहयोगी , कृपया मेरी हार्दिक बधाई स्वीकार करें।
मंगल कामनाओं सहित,
भवदीय,
केदार नाथ साहनी

****

सुधा जी,
" हिन्दी चेतना" फादर बुल्के अंक पढ़वाकर बड़ा उपकार किया। आपकी पूरी टीम को नमन।
आपका छोटा भाई,
बलराम अग्रवाल

सुधा जी,
लगभग छः साल से मैं हिंदी चेतना नियमित रूप से पढ़ रही हूँ। विविध सामग्री से परिपूर्ण प्रत्येक अंक अपने आप में विशेष होता है। इस बार के विशेषांक द्वारा महान हिंदी प्रेमी तथा तुलसी भक्त फ़ादर कामिल बुल्के के बहु आयामिक व्यक्तित्व से परिचित करवा कर हिंदी चेतना ने हम सब को भी उनके प्रति श्रद्धा सुमन समर्पित करने का अवसर दिया। मेरी ओर से बधाई तथा शुभकामनाएं।
सादर,
शशि पाधा (अमेरिका)

****

आदरणीय श्याम जी,
फादर कामिल बुल्के विशेषांक के लिये आपको ढेरों बधाईयाँ ! फादर बुल्के जी पर एक स्थान पर इतनी पठनीय सामग्री देख कर अत्यंत प्रसन्नता हुई । यह अंक हिन्दी साहित्य प्रेमियों के लिये एक दुर्लभ अंक है। आपके इस असाधारण प्रयास का मैं अभिनंदन करता हूँ ।
अमित कुमार सिंह (कनाडा)

****

आदरणीय श्याम जी ,
"हिन्दी चेतना" का फादर कामिल बुल्के विशेषांक पढ़ा, पढ़कर बहुत हैरानी और प्रसन्नता हुई !
प्रथम बार मेरा परिचय फादर कामिल बुल्के से" हिन्दी चेतना" ने ही कराया । इतने महान व्यक्तित्व से मैं अभी तक अन्जान थी!
इसके लिये आपको शतः शतः धन्यवाद! कनाडा में रहते हुये भी भारतवासियों को उनके महान व्यक्तित्व से साक्षात्कार कराने का आपका अतुलनीय प्रयास काबिले तारीफ है! आपको इसके लिये बहुत– बहुत बधाईयाँ ।

किरन सिंह,
बनारस, हिन्दु विश्वविधालय, (भारत)

****

सम्पादक जी,
भारत के सर्वोच्च सम्मान 'पद्मभूषण' से अलंकृत, बहुभाषाविद्, हिन्दी प्रेमी डॉ. कामिल बुल्के की जन्मशताब्दी पर प्रकाशित यह विशेषांक विश्व के हिन्दी-प्रेमियों के लिए एक अनुपम उपहार है। विभिन्न स्रोतों से प्राप्त ठोस सामग्री सराहनीय है। डॉ. दिनेश्वर प्रसाद जी ने 'डॉ. कामिल बुल्के जीवन-रेखाएँ' में उनके समग्र जीवन का इतना विस्तृत एवं सर्वांगीण ब्यौरा दिया है जिससे डॉ. बुल्के का व्यक्तित्व एवं कृतित्व साकार हो उठा है। फादर बुल्के पहले शोधार्थी थे जिन्होंने हिन्दी में शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत करने की अनुमति ग्रहण कर परवर्ती शोधार्थियों के लिए भारतीय भाषाओं में शोध-प्रबन्ध प्रस्तुतकरने का मार्ग प्रशस्त किया। एक विदेशी का यह हिन्दी-प्रेम, भारतीयों से अधिक भारतीय भाव हमारी आँखें खोलने वाला

प्रेरणास्रोत है , उन्होंने अपनी जीवनी-शक्ति का बूँद-बूँद रस निचोड़ कर हिन्दी की सेवा की। डॉ. पूर्णिमा फदर बुल्के को 'बीसवीं शताब्दी का ऋषि' उद्घोषित करते हुए, उनके मृदुल-आत्मीय स्वभाव, उदारहृदयता आदि गुणों से परिचित कराते हुए उनके महान संदेश को उजागर करती है, उनका यूरोप से आकर भारत में बसना और भारतीय कहलाने में गर्व महसूस करना यह बतलाता है कि महादेशों और देशों के बीच की दीवारें मिली हैं। सारे पृथ्वीवासी एक ही कुटुम्ब के सदस्य हैं। ईसा के पुजारी की राम कथा का अद्वितीय अन्वेषक बनना सिद्ध करता है कि 'भाषाएँ विभाजक नहीं, वे तो मानव-मानव को जोड़ने के पुल हैं।' श्रीनाथ प्रसाद द्विवेदी जी ने गागर में सागर भरते हुए स्पष्ट कर दिया है कि 'बाबा बुल्के के रोम-रोम में राम और साँस-साँस में तुलसी बस गए थे..... तन से, रंग से वह विदेशी थे लेकिन मन और मिजाज से सच्चे भारतीय। महाकवि प्रो. हरिशंकर आदेश जी ने 'एक महान् हिन्दी-प्रेमी' लेख में उन्हें 'भारतीयों को अपने भूले नैतिक मूल्यों से पुन परिचित कराने वाला सन्त' माना है। अमित कुमार सिंह जी ने अपनी कविता में बड़े सरल शब्दों में फादर बुल्के के 'अमित व्यक्ति' की सशक्त-समग्र झांकी प्रस्तुत की है। इसके अतिरिक्त डॉ. बुल्के के अपने विचारों व भाषण को मूल रूप में प्रकाशित करने से उनकी विचारधारा तथा हिन्दी एवं रामभक्ति के प्रति आकर्षण का वर्णन बड़ा ही प्रभावोत्पादक बन पड़ा है तथा हिन्दी को अंग्रेजी से कम समझने वाले भारतीयों के लिए प्रेरक है जैसे-'अपनी भाषा की जड़े मनुष्य में बहुत गहरी होती हैं। अपनी भाषा के माध्यम से मनुष्य जैसा ज्ञान प्राप्त कर सकता है। वैसा अन्य भाषा के माध्यम से नहीं'। भारत में हिन्दी अंग्रेजी का स्थान ले सकती है। उनका विश्वास था कि ज्ञान-विज्ञ-ान के किसी भी विषय की सक्षम अभिव्यक्ति हिन्दी में संभव है। अस्तु, हिन्दी के प्रति हिन्दी-भाषियों के कर्त्तव्य को डॉ. बुल्के ने बड़े ही तर्कपूण ढंग से सुझाया था।

मुखपृष्ठ पर फादर बुल्के का चित्र बड़ा ही सजीव है उनकी मुस्कान भरी आँखें मानों आभार प्रकट कर कह रही हों कि कैसा सुखद संयोग है कि विदेश में जन्मे, भारत-भूमि व हिन्दी-प्रेमी को विदेशों में बसे भारतीयों ने कितने सुंदर ढंग से स्मरण कर सम्मानित किया है।

सम्पादक जी, हिन्दी लेखकों पर विशेषांक की परम्परा को गौरान्वित कर रही है इसे बनाए रखें। इस महान् कार्य के लिए श्री श्याम त्रिपाठी जी तथा उनके सहयोगी बधाई के पात्र हैं। आपकी हिन्दी के प्रति निष्ठा तथा समर्पण अभिनन्दनीय है। पत्रिका का स्तर निखरता जा रहा है। सचमुच 'हिन्दी चेतना' विश्व चेतना को सुसंस्कृत कर रही है। 'हिन्दी चेतना' की उत्तरोत्तर प्रगति के लिए शुभ-कामनाएँ-
डॉ. जनक खन्ना (कैनेडा)

****

त्रिपाठी जी,

"हिन्दी चेतना" के जुलाई का फादर कामिल बुल्के विशेषांक मिला। बहुत अच्छा लगा। एक ही बार में उसे पढ़ गई। हिन्दी चेतना के माध्यम से फादर बुल्के के बारे में बहुत कुछ जानने को मिला। इसके लिए आभारी हूँ । उनकी सम्पूर्ण जीवनी , उनके विचार , उनके कार्यों के बारे में जान कर मन भावाविभूत हो उठा और मस्तक श्रद्धा से नत हो गया। यूरोप (बेल्जियम) मूल के फादर कामिल बुल्के मिशनरी के कार्य से एक ईसाई धर्म –प्रचारक के रूप में भारत आये और भारत की आत्मा में आत्मसात हो गये। यहाँ के रंग में पूरी तरह रंग गए। भारतीय दर्शन एवं सांस्कृतिक आदर्शों से बहुत प्रभावित हुये। अन्त में भारत की मिट्टी में ही समा गए। यहाँ आकर उन्होंने भारत की जन भाषा हिन्दी सीखी। बड़ी लगन व परिश्रम से उसका गहन अध्यन किया ,उसे मनसा , वाचा, कर्मणा से अपनाया। गोस्वामी तुलसीदास के 'मानस' व 'विनयपत्रिका' का पठन – पाठन मनन करके फादर बुल्के हिन्दी के विद्वान और रामकथा के शोध कर्त्ता हो गये। गोस्वामी तुलसीदास की राम भक्ति में उन्होंने अपने इष्ट जीसस की भक्ति का दिग्दर्शन किया। उन्हें ऐसा लगा कि 'मानस' की विचार धारा और ईसा मसीह के प्रवचनों के विचारों में एक सामंजस्य है, दोनों एक ही बात का प्रतिपादन करते हैं – सबों की भलाई परोपकार " परहित सरिस धर्म नहिं भाई । पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।।" सबके प्रति सद्भावना , मानव मात्र की सेवा फादर बुल्के जीवन का व्रत था। हमारी राष्ट्र भाषा हिन्दी के लिए फादर कामिल बुल्के का प्रेम , उनकी लगन व निष्ठा सराहनीय है, अनुकरणीय है । वे हिन्दी के प्रचार– प्रसार एवं उन्नति के लिए आजीवन काम करते रहे। हिन्दी भाषा भाषियों के मन में हिन्दी के प्रति प्रेम व गौरव की भावना का संचार करते रहे, भारतवासियों को उनके भूले बिसरे सांस्कृतिक मूल्यों से पुन: परिचित कराने का प्रयास करते रहे। उन्होंने अपने लेख, भाषण और रामकथा पर शोध कार्य द्वारा हिन्दी भाषा के प्रचार– प्रसार के क्षेत्र में जो कार्य किया , वह अद्वितीय है । इसके लिए हम भारतवासी उनके चिर ऋणी रहेंगे। हिन्दी के ऐसे साधक , हितैषी , वीर सेनानी को मेरी श्रद्धांजलि अर्पित है। 'हिन्दी चेतना' के इस अंक में सभी लेख संस्मरण आदि बड़े मार्मिक और सुन्दर हैं। डॉ. पूर्णिमा केडिया जी का " बीसवीं शताब्दी का ऋषि" अत्यन्त रोचक है । फादर बुल्के के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को उजागर करता है। "आधुनिक युग के तुलसीदास" में विदेशी , परन्तु मन से भारतीयता के रंग में रँगे गोस्वामी जी के " मानस" के अनन्य प्रेमी तुलसीदास से प्रभावित , रामकथा के शोधकर्त्ता फादर बुल्के के दर्शन होते हैं । विद्वान लेखकों के सहयोग ने पत्रिका में चार चाँद लगा दिये हैं। फादर कामिल बुल्के जैसे हिन्दी के अनन्य प्रेमी और सच्चे साधक की जन्म शताब्दी के अवसर पर "हिन्दी चेतना" ने इतना सुन्दर विशेषांक निका-लकर प्रशंसनीय व सराहनीय काम किया है । इसका प्रकाशन अपने में एक मिसाल है। यह फादर कामिल बुल्के का ही सम्मान नहीं अपितु हिन्दी का भी सम्मान है । " हिन्दी चेतना" के मुख्य सम्पादक श्री श्याम त्रिपाठी जी सम्पादक मंण्डल व सभी

सहयोगी बधाई व साधुवाद के पात्र हैं । हिन्दी के प्रति आस्था का संदेश देश विदेश में सबों का मार्ग दर्शन करेगा। मेरी हार्दिक मंगल – कामनाएँ स्वीकार करें।
राजकुमारी सिन्हा (कैनेडा)
****

जुलाई 2009 के 'हिन्दी चेतना' अंक में जाने माने कवियों श्री ओमप्रकाश आदित्य, श्री नीरज पुरी और श्री लाड़ की सड़क दुर्घटना में असमय मृत्यु का समाचार पढ़ा, मन को गहरा आघात पहुँचा। आघात फिर गहरा होता चला गया जब अल्हड़ बीकानेरी जी के दिवंगत होने का समाचार पढ़ा। हास्य कवि ओम व्यास ओम के निधन का समाचार मेरे लिए विशेष रूप से कष्ट दायक था। व्यास जी दो –तीन वर्ष पूर्व राले , नार्थ कैरोलाइना में कविता पाठ के लिए आमन्त्रित हुये थे और मंच पर मैंने ही उनका परिचय करवाया था। मैं समस्त कवि परिवार की ओर से इ न सब कवियों को श्रद्धा सुमन अर्पित करती हूँ। प्रभु से प्रार्थना है वह इन दिवंगत आत्माओं को शान्ति प्रदान करें।

ऊषा देव (अमेरिका)
****

प्रिय सुधा जी ,
'हिन्दी चेतना' के दो अंक मिले। " फादर कामिल बुल्के" विशेषांक आद्योपांत एक ही बैठक में पढ़ गया । लेखों ने दिल के तारों पर यादों के कई गीत छेड़ दिये। जिन दिनों मेरे पिता जी (श्री ओम प्रकाश दीक्षित) अपने शोध प्रबन्ध " आचार्य स्वयँम्भूकृ त परम्कम चरिउ व गोस्वामी तुलसीदास कृत रामचरित मानस का तुलनात्मक अध्यन पर काम कर कर रहे थे, हमारा छोटा सा घर राम – साहित्य से भर गया था। मैं एक पुस्तक बड़े चाव से पढ़ा करता था, जिसमें विभिन्न धर्मों , भाषाओं और देशों की रामकथाओं का वर्णन था। वह पुस्तक किसी अजीब से नाम वाले कामिल बुल्के की लिखी हुई थी। उसके बारे में मुझे कुछ पता नहीं था। फादर बुल्के बल्जियम से थे जहाँ भाषाई विवाद अब भी चरम सीमा पर है। वहाँ अभिजात्य वर्ग शुरू से ही फ्रेंच बोलता रहा है और पश्चिम व पश्चिमोत्तर फ्लेमिश (डच भाषा की ए क उप भाषा) बोलने वाले बेल्जियनों को हेय दृष्टि से देखता रहा है। राज काज और उच्च शिक्षा सब फ्रेंच में होती थी। आम तौर से फ्रेंच बोलने वाले बेल्जियन जिन्हें बालून कहा जाता है , डच –फ्लेमिश नहीं सीखते हैं जबकि अधिकतर डच –फ्लेमिश बोलने वाले लोग फ्रेंच जानते हैं। अब बेल्जियम वास्तव में भाषाई आधार का बँटा दो सरकारों वाला देश है जो राजधानी ब्रसेल्स के कारण अब तक एक है। संयोग से जहाँ फादर बुल्के ने धातुकर्म इंजीनियरिंग की दो साल तक पढ़ाई की , उसी कैथोलिक विश्वविद्यालय लुवेन डच में, फ्रेंच में, मैंने भी दो साल (1973– 75) काम किया है। छात्रों के विद्रोह के कारण (1970 –71) में भाषाई आधार पर उस प्राचीन विश्व विद्यालय (पाँच सौ साल पुराना) के दो टुकड़े कर दिये गये थे)। फ्लेमिश (डच) बोलने वाला लुवेन वि. वि. अपनी जगह रहा , फ्रेंच बोलने वाला यूनीवर्सिटी कैथोलिक डू लोवेन एक नए गाँव में (नाम नया लुवेन ला नूवी) में बिल्कुल नए सिरे से बनाया गया। विभागों , कर्मचारियों , प्रयोग शालाओं , पुस्तकालयों , में सब जगह हिन्दुस्तान पाकिस्तान जैसा बँटवारा हुआ। शुरू शुरू में पड़ोस के एक और विश्वविद्यालय (मांस फ्रेंच में और बर्गन , फ्लेमिश में) सेमिनार सुनने गया। वक्ता जेनेवा , स्विटज़रलैंड से थे , जिन्हें मैं पहले अपने विद्यार्थी जीवन में अमरीका में कई बार अंग्रेज़ी में सुन चुका था । उन्होंने फ्रेंच में बोलना शुरू किया। मैने खड़े होकर उनसे कहा कि मैं अभी नया हूँ , मुझे फ्रेंच नहीं आती है ,क्या वे अंग्रेज़ी में बोलने की कृपा करेंगे? विभागाध्यक्ष ने फ्रेंच में पूंछा कि जिन लोगों को फ्रेंच नहीं आती है, वे हाथ उठाएँ । बल्कि अपने हाथ भी उठा दिये। वक्ता ने बड़े आराम से अंग्रेज़ी में भाषण दिया । दो वर्ष के अंदर में काफ़ी परिश्रम कर इस लायक हो सका कि फ्रैंच और डच , दोनों में भौतिकी गणित की प्रस्तुतियाँ समझ सकूँ। फादर बुल्के के इसी भाषाई संघर्ष व अपमान के अतीत ने उन्हें हिन्दी के लिए उठ खड़ा होने की प्रेर- णा दी। उनके जैसे पुण्यात्मा से परिचय कराने वाले विशेषांक के लिए अनेकानेक धन्यवाद। फादर बुल्के एक बेल्जियम जेसुइट (कैथोलिक इसाइयों का एक विशिष्ट समुदाय के पादरी थे। संयोग से सेंट लुइस विश्वविद्यालय, जहाँ मैं लगभग चौबीस साल से काम कर रहा हूँ , भी बेल्जियम जेसुइट पादरियों द्वारा संस्थापित किया गया था।)
विजय विवेक दीक्षित,
सेंट लुइस , मिसूरी (अमेरिका)
****
सम्मानीय श्री त्रिपाठी जी,
नमस्कार।
डॉ. कामिल बुल्के विशेषांक (जुलाई 2009) जैसे सशक्त , सुसंम्पादित एवं प्रेरणादायक प्रकाशन के लिए आपका एवं आपके 'हिन्दी चेतना' सहयोगियों का हार्दिक अभिनन्दन! डॉ. दिनेश्वर प्रसाद जी का ' जीवन रेखाएं' लेख एवं महाकवि प्रो. हरिशंकर आदेश जी का " एक महान हिंदी प्रेमी" लेख अति प्रशंसनीय है। डॉ. कामिल बुल्के ने जो दीक्षान्त भाषण " हिन्दी के प्रति हिन्दी भाषियों का कर्त्तव्य" 1968 में दिया था ,आज भी हमारा मार्ग दर्शन करने में समर्थ है। डॉ. पूर्णिमा केडिया " अन्– नपूर्णा " जी, डॉ. श्री नाथ द्विवेदी जी और धर्मपाल महेन्द्र जैन जी के संस्मरण भी अति रोचक है। सन् 2009 के प्रथम भाग में दिवंगत साहित्यकारों के सम्बंध श्री अभिनव शुक्ल एवं श्री गजेन्द्र सोलंकी द्वारा रचित श्रद्धांजलि लेख एवं शब्दांजलि छंद हिन्दी जगत पर हुये आघात का मार्मिक चित्रण करते हैं । " हिंदी चेतना" के जुलाई विशेषांक में प्रकाशित सभी रचनाकारों को बधाई ।
यश पाल लाम्बा (कैनेडा)
****
बंधुवर त्रिपाठी जी,
विनम्र अभिवादन।
'हिन्दी चेतना' के अंक मुझे नियमित मिल रहे हैं– यह पत्रिका एक माध्यम है , जो मुझे ही नहीं , विश्व के कई सृजन – शिल्पियों को आपस में स्नेह सूत्र में बांधे हुये है। आपका प्रयास , लगन , निष्ठा, परिश्रम वंदनीय , अभिनंदनीय है। 'डॉ. कामिल

बुल्के' की ज्योति जलाये रखने में पूर्णत: सक्षम है। डॉ. कामिल बुल्के पर इतनी समृद्ध सामग्री जुटाने का जो महत कार्य आपने किया है, वह निश्चित ही सराहनीय है । शिक्षा अधिकारी के प्रशिक्षण के अवसर पर मैं निरंतर तीन माह तक डॉ. कामिल बुल्के जी सम्पर्क में रहा। अनुभूत हुआ , जैसे मैं किसी ऋषि के सानिध्य में हूँ । स्मरण कर आज भी रोमांचित हो उठता हूँ।

आपका अपना
मधुप पांडेय (भारत)

****

कामिल - बुल्के विशेषांक – जैसे एक साँस में ही सारा आत्म-सात कर लूँ। स्वयं पर लज्जित होने जैसा भाव आया, वह ऊर्जा, वह प्रेरणा, वह उत्कंठा, वह आदर्श, वह संस्कार वह तड़प हम भारतीयों को भी आनी चाहिए। हिंदी के प्रति एक समग्र समर्पण, शब्द कोष लिखना, तुलसी की भाव प्रवणता को आत्म-सात करना। बुल्के जी को अगणित नमन।
हिंदी चेतना-----ने भारत से दूर-सुदूर होते हुए भी, हमारी चेतना को भारत से जोड़ने का संकल्प , यथार्थ में सच कर दिखाया।
सरहदें देह की हैं, बिना देह का मन ,
जिसे चाहता है, वहीं पर रहेगा,
कि तन एक पिंजरा जहाँ चाहे रख लो ,
कि मन का पखेरू तो उड़ कर रहेगा
यह विशेषांक एक ऊर्जा बिंदु है, राष्ट्र भाषा के लिए चुनौतीपूर्ण उत्तर है। मैं तो कहती हूँ
कामिल बुल्के ' समय के हस्ताक्षर' हैं।
आपको साधुवाद
मृदुल कीर्ति (अमेरिका)

****

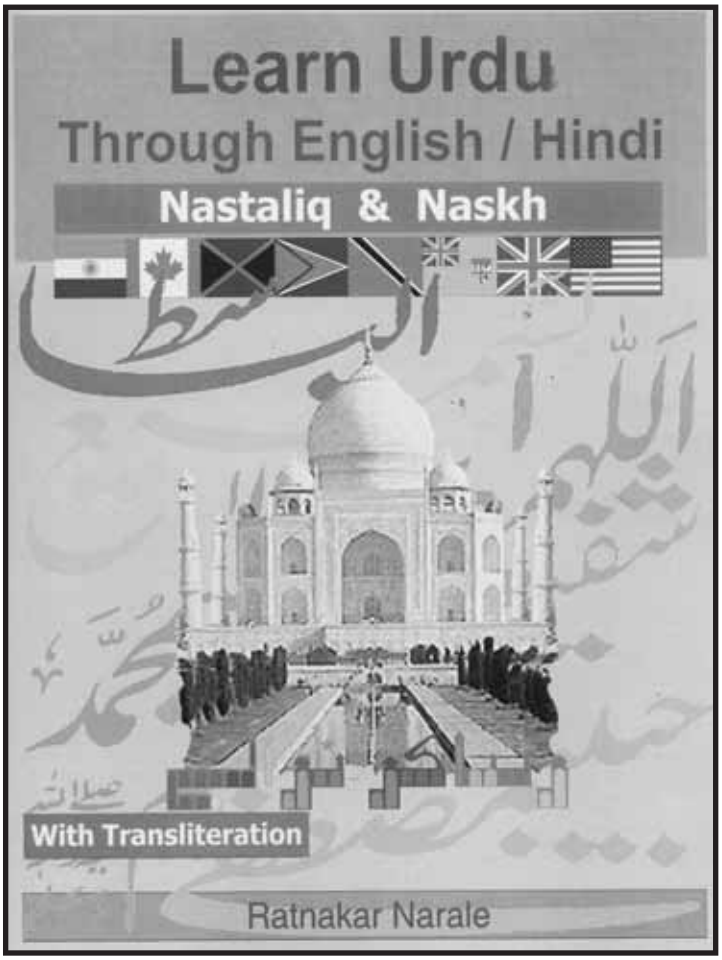

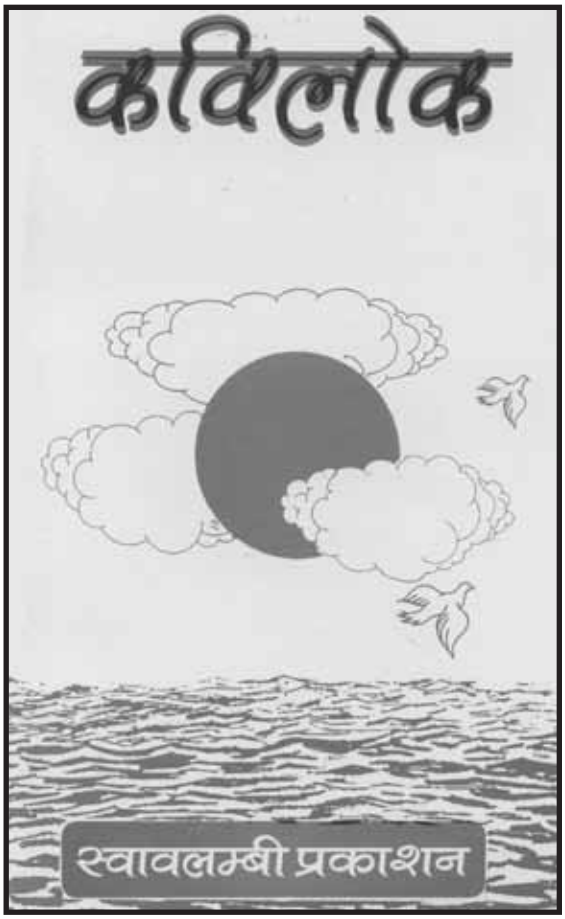

हँसो इस तरह हँसे तुम्हारे साथ दलित यह धूल भी ।
चलो इस तरह कुचल न जाये पग से कोई शूल भी ॥
सुख , न तुम्हारा सुख केवल जग का भी उसमें भाग है ।
फूल डाल का पीछे , पहले उपवन का शृंगार है ॥

– गोपाल दास नीरज

ग़ज़ल

साकी तेरे मैख़ाने आये एक ज़माना बीत गया
दिल की बातें सुने सनाये एक ज़माना बीत गया

जाम पकडने से मा-ज़ूर[1] दर्द की शिद्दत[2] क्या कहिये
जाम उठा होंटों तक लाये एक ज़माना बीत गया

नासह[3] की बातों से परेशां या अपनी कमज़ोरी थी
मैख़ाने की समत[4] भी आये एक ज़माना बीत गया

साकी ने पुछवा भेजा है हाल भी और ख़ैरीयत भी
क्यूं हम को मै पीने आये एक ज़माना बीत गया

साकी तेरा वो जाम का भरना हंस कर देना छलकाना
मैख्वारी[5] के लुत्फ ऊठाये एक ज़माना बीत गया

चाक ज़ुनू में[6] कर बैठे और अब इस को फैलायें क्या
दामन[7] को भी सिये सिलाये एक ज़माना बीत गया

तोड के बंधन रसमों के मैखाने आयें जायेंगे
ज़ब्त का कांधों बोझ उठाये एक ज़माना बीत गया

चैन ज़रा गर मिल जाये तो *शैदा* पल भर सोयेंगे
ख्वाबों के वो लुत्फ उठाये एक ज़माना बीत गया

महेश नन्दा *शैदा*
कैनेडा

---

(1) असफल, (2) दर्द का ज़ोर (3) नसीहत देने वाला,
(4) ओर, (5) मै पीना, (6) पागलपन में फाडना, (7) झोली

غزل

۱۔ ساقی تیرے میخانے آئے ایک زمانہ بیت گیا
دِل کی باتیں سُنے سُنائے ایک زمانہ بیت گیا

۲۔ جام پکڑنے سے معذُور و درد کی شِدّت کیا کہیئے
جام اُٹھا ہونٹوں تک لائے ایک زمانہ بیت گیا

۳۔ ناصح کی باتوں سے پریشاں یا اپنی کمزوری تھی
میخانے کی سمت بھی آئے ایک زمانہ بیت گیا

۴۔ ساقی نے پُچھوا بھیجا ہے حال بھی اور خیریت بھی
کیوں ہم کو مے پینے آئے ایک زمانہ بیت گیا

۵۔ ساقی ترا وہ جام کا بھرنا ہنس کر دینا چھلکانا
میخواری کے لُطف اُٹھائے ایک زمانہ بیت گیا

۶۔ چاک جُنوں میں کر بیٹھے اور اب اسکو پھیلائیں کیا
دامن کو بھی سیئے سِلائے ایک زمانہ بیت گیا

۷۔ توڑ کے بندھن رسموں کے میخانے آئیں جائینگے
ضبط کا کاندھوں بوجھ بنائے ایک زمانہ بیت گیا

۸۔ چین ذرا گر مِل جائے تو شیدا پل بھر سوئینگے
خوابوں کے وہ لُطف اُٹھائے ایک زمانہ بیت گیا

مہیش نندہ "شیدا"
واٹرلو۔ کینیڈا

इस इश्क की गली से तुम भी गुज़र के देखो
हम तो खरे न उतरे , तुम तो उतर के देखो

नरेश शांडिल्य

कहानी

संस्कार शेष

कृष्णबिहारी (अबूढ़वी)

"कल शाम . . . ये आपको मारेंगे . . ."
"कौन"
" यही लड़के" और तुम लोग देखते रहोगे . . ."
"हम कुछ नहीं कर सकते . . . बीच में आए तो हम भी मारे जाएंगे . . .हमने तो आपको पहले ही मना किया था . . .आप तो चले जाएँगे यहां से . . .लेकिन हमें तो यहीं रहना है . . ." सिंह ने कहा।उसके साथ रतौड़ी और मिश्रा भी थे। सिंह को सुनने के बाद उसने भर नज़र तीनों को देखा।उसके देखने में एक चुनौती थी। उस चुनौती के सामने उन तीनों की आँखों का भय मुँहबाए खड़ा था।
"ठीक है . . .ऐसा करो . . . मेरा साथ छोड़ दो . . .मैं भी नहीं चाहता कि मेरी वज़ह से तुम सब हमेशा मारे जाओ . . .मेरा क्या है . . .मारा भी गया तो एक बार मारा जाऊँगा . . .हालांकि .अगर तुम तीनों में से एक मैं यहाँ रहता होता तो यह नौबत ही नहीं आती कि कोई सेण्टर सुपरिनटेण्डेण्ट कभी मारा जाता . . . इसी वक़्त से मेरे साथ दिखना छोड़ो . . .अपने बचाव में क्या करूँगा यह मुझे सोचने दो . . ."

सिंह, रतौड़ी और मिश्रा, तीनों बगैर कुछ बोले चले गए। उनके साथ उनका अपराध -बोध भी गया। वह उत्तर पुस्तिकाओं को सील कर लेने के बाद बाहर निकला था। तीन बजे परीक्षा ख़त्म हुई थी। औपचारिकताओं को पूरा करने में पैंतीस –चालीस मिनट का समय लग जाता था। जब वह हॉल से निकलकर अपने कमरे की ओर चलता तबतक घड़ी के कांटे तीन चालीस –पैंतालीस पर पहुंच रहे होते थे। हॉल के बाहर ही करीब बीस -पचीस लड़के झुण्ड बनाए खड़े दिखते जिनकी आँखों और हाव –भाव से हिंसक चिंगारियां निकलती होतीं मगर उससे आँख मिलते ही वे सब अपनी आँखें झुका लेते। लगता कि उनके हौसले पस्त हो गए हैं। उसे भी यह विश्वास नहीं था कि लड़के अपनी योजना को इस हद तक ले जा सकते हैं। लड़कों के झुण्ड के पास ही हेड मास्टर खड़ा मिलता था जो मुँह फुलाए उसके साथ पचास मीटर तक बिना बोले साथ चलता और अपने बंगले के पास पहुँचते ही निरपेक्ष भाव से अपना दाहिना हाथ उठाकर यह संकेत देता कि अब कल मिलेंगे। पिछले सात दिनों से यही हो रहा था।उस दिन भी यही हुआ। हेड मास्टर हॉल के बाहर खड़ा मिला।उसकी नज़रें नीची थीं। यह जानने के बाद कि स्कूल के लड़के इस हद तक गिर सकते हैं उसका मन हुआ कि वह हेड मास्टर से पूछे । " तुम हेड मास्टर हो किस बेवक़ूफ ने तुम्हें हेड मास्टर नियुक्त किया है तुम नामर्द की औलाद . . .तुम्हें तो वहाँ डूब मरना चाहिए जहाँ चुल्लू भर पानी भी न हो . . ." मगर उसने हेड मास्टर से कुछ कहा नहीं। वह सिर्फ यह सोचने में अपना समय ख़र्च कर रहा था कि कल शाम आख़िरी परचे की उत्तरपुस्तिकाओं को सील करने के बाद किस तरह से इस स्कूल से निकला जाए कि मारपीट की वारदात ही न होने पाए और एक अप्रिय प्रसंग से उसका पीछा छूटे। वह इसी उधेड़बुन में था कि वह जगह आ गई जहाँ से हेड मास्टर अपने बंगले के गेट की ओर हाथ उठाकर मुड़ जाता था। उसने हेड मास्टर के उठते हाथ की ओर देखना भी मुनासिब नहीं समझा। लकवाग्रस्त अशक्त प्रशासनिक अधिकारी और दिमाग से दीवालिए आदमी में उसे कोई दिलचस्पी पहले दिन से ही नहीं थी।वह गेस्ट रूम के अपने कमरे की ओर बढ़ते हुए सोच रहा था कि लड़के आज तो हमला कर नहीं सकते। अभी कल एक परचा और होना है। मार - पीट या जो कुछ भी होना है वह कल परचा ख़त्म होने के बाद ही होगा।कमरे में आकर उसने चाय बनाई।उस एक कप चाय की एक - एक घूंट ने उसे पिछले दिनों की एक– एक घटना से रूबरू करा दिया . . .

यही कोई डेढ़ महीने पहले उसे देश के सबसे नए सीमावर्ती पहाड़ी प्रांत में टी ज़ी .टी . स्केल में नौकरी मिली थी। यह नया सीमावर्ती प्रांत हिन्दुस्तान में शामिल होने से पहले एक नामालूम और छोटा -सा देश था। पाँच साल पहले ही इसका हिन्दुस्तान में विलय हुआ था और एक केयर टेकर सरकार नामिनेटेड मुख्यमंत्री के संरक्षण में बना दी गई थी लेकिन अब पाँच साल बाद वहाँ पहले आम चुनाव की घोषणा हो चुकी थी मगर इस राजनीतिक माहौल को भी देश के अन्य हिस्सों के लोग न के बराबर जानते थे। सबने मना किया कि जिस प्रदेश को देश के लोग ही नहीं जानते वहाँ जाना बुद्धिमत्ता नहीं है मगर उसने किसी की नहीं सुनी।राजधानी के शिक्षा विभाग ने प्रदेश के चार जिलों में से ए क के हायर सेकेण्डरी स्कूल के लिए उसे तदर्थ नियुक्ति -पत्र दिया था। हायर सेकेण्डरी स्कूल भी उसे इसलिए मिल सका कि वह पोस्ट ग्रेजुएट था। अन्यथा क्या पता उसे किसी मिडिल या प्राइमरी स्कूल में भेजा गया होता। प्रदेश के दक्षिणी हिस्से के जिस एकमात्र जिले में उसने नौकरी ज्वायन की उसका शहर कुल एक -डेढ़ किलोमीटर में बसा था। बाज़ार , सी आर पी कैंप , अस्पताल , स्कूल ,एस आई बी का कार्यालय और एक छोटी -सी बस्ती। शेष आबादी हिमालय की वादियों में छिटपुट बिखरे उन गांवों में थी जिनमें दो -चार घर दूर -दूर बसे थे। तदर्थ नियुक्ति पत्र में तीन महीने बाद स्थायी किए जाने का संकेत था वह भी तब जब रिपोर्ट संतोषजनक हो। अभी यह अवधि बीतने भी नहीं पाई थी कि उसे जिले के दूरदराज़ के एक बिल्कुल ही अविकसित क्षेत्र में चल रहे मिडिल स्कूल की बोर्ड परीक्षा के लिए सेण्टर सुपरिनटेण्डेण्ट होकर जाने का आदेश पत्र थमा दिया जिला मुख्यालय ने। दो शिक्षिकाओं के नाम भी उस आदेश पत्र में थे जो इन्विजिलेटर की हैसियत से उपस्थित होने वाली थीं। आठ परचे होने थे। यानी एक दिन पहले जाए तब कहीं वहाँ की व्यवस्था को अपनी निगरानी में सुचारू रूप से चला सकेगा। साथी अध्यापकों में से दो तीन ने बताया कि जहाँ वह सुपरिनटेण्डेण्ट होकर जा रहा है वहाँ सिंह ,रतौड़ी और मिश्रा हैं जिनसे उसे हर तरह का सहयोग मिलेगा। सिंह और मिश्रा बलिया

के हैं और रतौड़ी उत्तर प्रदेश के ही पर्वतीय अंचल के रहने वाले हैं। उसके रहने खाने और ज़रूरी सुविधाओं का ख़याल वे रखेंगे। इन आश्वासनों के बावजूद वह अपने बिस्तरबन्द के अलावा चीनी, चायपत्ती और पाउडर मिल्क का एक डिब्बा साथ लेकर वहाँ पहुँचा था। जगह एक बहुत छोटे -से गाँव जैसी थी। नितान्त अविकसित। किसी छोटे कस्बे के छोटे बच्चे - सी। वहाँ सबसे पहले सिंह से मुलाकात की थी। वह गणित का अध्यापक था और उससे पाँच -छह साल छोटा था। रतौड़ी और मिश्रा से सिंह ने मिलवाया। वे क्रमशः विज्ञान और हिन्दी पढ़ाते थे और उम्र में सिंह की तरह उससे कम ही थे। सिंह ने अपने साथ रहने का प्रस्ताव भी दिया था लेकिन गेस्ट रूम में रूकना उसे सुविधाजनक लगा । तीनों शादीशुदा तो थे लेकिन वहाँ अकेले ही रह रहे थे। पहाड़ के निर्जन और दुरूह इलाके में जीवन भी पहाड़ -सा कठिन था इसलिए वे अपनी बीवी को माँ -बाप के पास छोड़कर इस स्कूल में नौकरी करते हुए हर हाल में खुश दिखने - दिखाने की कोशिश कर रहे थे। यद्यपि वहाँ खुश हो सकने लायक कुछ भी नहीं था। ज़िन्दगी ही नहीं थी तो खुशी कहाँ से होती। हिमालय की उस वादी में शाम छह बजते ही रात हो जाती थी और सियार बोलने लगते थे जिनकी हुआंने की आवाज़ उसमें एक छटपटाहट वाली बेचैनी भर देती थी। न जाने वे लोग किन चीजों में अपनी खुशियाँ तलाशते हुए वहाँ जी रहे थे। ले -देकर थोड़ी सी हलचल दिन में तब दिखती थी जब आने वाले आम चुनाव का लाउड स्पीकर से प्रचार करती किसी राजनीतिक दल की कोई जीप गुज़रती। इन सब स्थितियों में भी उसे लगा कि ये नौ दिन किसी तरह से गुज़र ही जाएंगे लेकिन उसका सोचना कुछ समय बाद ही गलत साबित हुआ जब उसे हेड मास्टर ने अपने बंगले पर बुलवाया।

"आप फैजाबाद के हैं यह जानकर खुशी हुई . . .मैं भी फैजाबाद के एक गाँव से हूँ . . .।"

वह चुप था। उसे ऐसी बातों से कभी कोई विशेष खुशी नहीं होती। ऐसी बातें आदमी की नैतिकता खरीदकर उसके व्यक्तित्व के दायरे को छोटा कर देती हैं।

"क्या पसंद करेंगे रात के खाने में" ।

" खाना तो सामने वाले होटेल में तय कर लिया है"

"होटेल छोड़िए . . .बताइए क्या पीएंगे . . .व्हिस्की . . .ब्राण्डी या रम . . .संग्रीला व्हिस्की तो यहां की बहुत खास है . . ."

"जी . मैं शराब नहीं पीता . . .।"

"मैं आपसे यह कहना चाह रहा था कि यह बहुत पिछड़ा इलाका है। यहाँ शिक्षा की शुरूआत का प्रारम्भिक दौर है। लोग पढ़े लिखे नहीं हैं। इम्तहान में नकल की परम्परा है . . ."

"मुझे पता है . . .लेकिन परम्पराएं टूटनी चाहिए . . ."

"बस . आप थोड़ा लिबरल रहें . . .आँखें बन्द कर लें . . ज़ो चल रहा है उसे चलने दें।" हेड मास्टर का चेहरा दांत चियारू हो गया था।

"मेरे लिए यह मुश्किल होगा . . .यदि मैं हॉल में रहूँगा तो नकल नहीं हो सकती . . .चलूं मैं . . ."

"आप सोच लें . . ."

"सोच लिया है . . .आप निश्चिंत रहें . . ." वह हेड मास्टर के बंगले से निकलकर अपने गेस्ट रूम में आ गया। कुछ देर बाद ही सिंह .रतौड़ी और मिश्रा भी आकर उसके कमरे में इकटठे हो गए। उन्होने भी समझाने की कोशिश की कि परीक्षाएं अब तक जैसी होती रही हैं वैसे ही होने दे। नकल - वकल रोकने के चक्कर में न पड़े लेकिन समझाने की उनकी यह कोशिश जवानी के जोश और ईमानदारी के भूत के सामने बौनी हो गई थी। मुश्किलों की शुरूआत की यह पहली कड़ी थी।

अगले दिन सुबह ग्यारह बजे तक वे दो शिक्षिकाएं भी आ गई जिन्हें मुख्यालय ने परीक्षा के दौरान निरीक्षिका नियुक्त किया था। दोनों नेपाली थीं और पास के गांवों में चलने वाले प्राइमरी विद्यालयों में पढ़ाती थीं। उनके साथ मिलकर उसने सीटिंग प्लान बनाया और उन्हें यह समझा दिया कि परीक्षा में नकल को हर हाल में रोकना है। लेकिन उसका यह निर्देश उन शिक्षिकाओं को भी विचित्र लगा और परीक्षा शुरू होने से पहले ही विद्यालय के परिवेश में रामरो मानछी छेई ना . . .रक्सी खान्देई ना . . ..रावन छ . . .अ . . .. .फैल गया। इसका मतलब यह था कि आदमी ठीक नहीं है। शराब नहीं पीता। पूरा रावण है। उसे लगा कि अच्छा ही हुआ जो उसकी छवि एक कठोर व्यक्ति के रूप में परीक्षा शुरू होने से पहले ही बन गई। मगर उसका सोचना तब ग़लत साबित हुआ जब हॉल में स्पष्ट रूप से मना करने के बाद भी कि किसी के पास कोई अवांछित सामग्री न हो , छात्र –छात्राओं की डेस्क और जेबों से संबंधित परचे के नकल की सामग्री तो सामग्री . पूरा पुस्तकालय निकलने लगा। कुल चौवन परीक्षार्थियों में से पचास के पास से अनफेयर मीन्स का मसाला निकला।खिड़की से वह सब बाहर फेंकने के बाद उसने सबको दुबारा चेतावनी दी कि चुपचाप जो आता है वह लिखें। मगर उसकी चेतावनी का भी कोई असर नहीं हुआ। उनकी खुसुर –पुसुर बन्द नहीं हुई। इतना ही नहीं जिसका मन होता वह सीट से उठ जाता और किसी भी सीट पर पहुँचकर दूसरे की उत्तर -पुस्तिका देखने लगता। दृश्य नागवार था इसके बावजूद उसने किसी की उत्तरपुस्तिका पर ऐसा कोई रिमार्क नहीं लिखा जिससे किसी परीक्षार्थी का भविष्य चौपट हो। पहले दिन ही परीक्षा के बाद विद्यालय परिसर में मरघटी सन्नाटा पसर गया। सिंह, रतौड़ी और मिश्रा के अलावा दो -तीन अध्यापक गेस्ट रूम में और आए . और यह जता गए कि स्कूल का नाम बहुत खराब होगा। उसने कहा कि स्कूल का नाम अबतक खराब रहा है मगर आगे नहीं होगा। अगले दिन एक हादसा हो गया। एक नकलची के पास से निकली पुरचियों को जब उसने फाड़कर खिड़की से बाहर फेंक दिया तो वह उलझ गया कि उसके कागजों में ड्रॉयविंग लाइसेंस भी था। आठवीं के छात्र के पास ड्रॉयविंग लाइसेंस। यह कोई अजूबा नहीं था। सभी परीक्षार्थी सोलह -सत्रह वर्ष से बड़े थे। सात दिन चली परीक्षा से इतना पता चल गया था कि चौवन में से पचास फेल होंगे। उसी शाम हॉल से निकलने पर सिंह ने बताया था कि कल ये लड़के परीक्षा खत्म होने के बाद उसे मारेंगे . . .और तब उसकी खोपड़ी घूम गई थी कि सच का साथ न देने वाला यह तथा –कथित सभ्य समाज कितना सहयोगी है ? उसने पता लगाया कि शाम होने से पहले ही यह जगह कितनी जल्दी और किस तरह छोड़ी जा सकती है। जिस होटेल में खाना खाता था , उसमें दूध सप्लाई करने वाली जीप हर शाम चार बजे आती थी और तुरन्त पांच–सात मिनट में वापस हो लेती थी। यदि उस

जीप से निकल सके तो अप्रिय प्रसंग बच सकता है। रात का खाना खाते समय उसने होटेल के नेपाली मालिक से बात की तो वह इस बात के लिए मान गया कि दूध वाली गाड़ी के ड्राइवर को कुछ अतिरिक्त पैसे देकर मना लिया जाएगा। सवेरे सबसे पहले उसने अपना सामान होटेल पहुँचवा दिया कि गाड़ी आते ही यह सब उसमें रख दिया जाए। यह प्लान उसने अकेले बनाया वरना इसके भी सार्वजनिक होने में कोई शंका नहीं थी। हर तरह के भय से असम्पृक्त दिखने की लापरवाह कोशिश करते हुए उसने आख़िरी परचा सम्पन्न कराकर दोनों इन्विजिलेटर अध्यापिकाओं को धन्यवाद दिया। बंडल को सील करने के बाद संबन्धित स-हायक शिक्षाधिकारी को सौंपने के बाद वह एक झटके में हॉल से बाहर निकला। हेड मास्टर पूर्ववत् खड़ा मिला। लड़कों का झुण्ड भी असंयमित दिखा। उसने उन सबकी ओर उचटती निगाह फेंकी और अचानक सामने नीचे स्कूल ग्राउण्ड में किसी राज-नीतिक दल के चुनाव प्रचार की सार्वजनिक सभा के आयोजन को जब होते देखा तो उसे लगा कि सभा की इस भीड़ में बहुत जल्द शामिल हो जाना चाहिए। भीड़ में शामिल हो जाने पर कम से कम उस जगह मार– पीट की आशंका ख़त्म हो जाती थी। वह साप्ताहिक बाज़ार का दिन था। गंवई किस्म की बाज़ार लगी हुई थी। सभा में यही कोई साठ– सत्तर लोग थे। स्टेज पर माइक के सामने नेता नेपाली भाषा में बहुत भावुक और तार्किक ढंग से अपनी बात कह रहा था। इसी ग्राउण्ड के नीचे बाज़ार था जिसके चौराहे पर एकमात्र होटेल में उसका सामान पहले से ही रखा हुआ था। एक मिनट से भी कम लगा होगा कि वह कूदते -फलांगते राजनीतिक सभा की भीड़ के बीचोबीच पहुँच गया। हेड मास्टर और झुण्ड बनाकर खड़े लड़कों में से किसी को यह अनुमान नहीं था कि वह इतनी ज़ल्दी उन सबके देखते - देखते उनके शब्दों में इस तरह भाग खड़ा होगा या कि अपने शब्दों में अपने बचाव की योजना बना लेगा। उसके भीड़ में घुसते ही लड़कों का झुण्ड भी उतनी ही तेज़ी से भीड़ में पीछे हो लिया। उनमें से दो के पास हॉकी स्टिक थी। वह कनखियों से उन सब पर दृष्टि जमाए था। सच तो यह था कि सामने स्टेज से नेता क्या बोल रहा है उससे उसे कोई सरोकार नहीं था। वह उसी संक्षिप्त -सी भीड़ के बीच से होकर नीचे बाज़ार तक पहुँचने की सूरत तलाश रहा था तभी उसे पीछे से किसी ने पुकारा . " सर . . . .सर . . ."

चौंकते हुए वह मुड़ा कि पास ही खड़े एक लड़के ने मुस्कराते हुए पूछा " सर . आप यहां कैसे" वह कोई उन्नीस -बीस साल का युवक था जिसे उसने पहचानने की कोशिश की। कहाँ देखा है इ से ? तुरन्त कुछ याद नहीं आया . "तुम जानते हो मुझे"?
"यस सर . . . मैं राजा लेप्चा . . . ट्वेल्थ बी . . .हमारे स्कूल में ही तो आप हैं . . .नाम्ची में . . .मैं वहीँ पढ़ता हूँ . . .यहाँ मेरा गाँव है . . .मैं हर हफ़्ते चला आता हूं . . .कल संडे है . . .यहाँ रहूँगा . . .अम्मा–बाबा का हाथ बटाऊंगा और परसों सुबह की बस से नाम्ची पहुँच जाऊँगा . . ."
"ओह . . .मेरा एक काम करोगे ? . . .मुझे बाज़ार में दीपेन होट ल तक पहुँचा सकते हो . . .अभी . . ."
" यस सर . . .मगर क्यों सर ?"

उसने बहुत संक्षेप में उस लड़के को बताया कि वहाँ किस सिलसिले में आया था और उसके काम की वजह से क्या हो गया कि लड़के उसे मारने पर तुले हैं।
"सर , यू डोण्ट वरी . . ज़स्ट शो मी दोज रास्कल्स . . ."
"लीव इट . . ज़स्ट रीच मी टू द होटेल . . ."
" नो . . . नो सर . . .यू शो मी दोज़ फेलोज . . .आइ विल किल देम . . ." राजा लेप्चा मानने को तैयार नहीं था। राजनीति-तक सभा में दूसरी ही सभा चल रही थी।उसने राजा को संकेत से दिखाया कि वह लड़का जिसका ड्रायविंग लाइसेंस उसने फाड़कर फेंका है वही इस ग्रुप का लीडर है। उस लड़के को देखते ही राजा के तन बदन में जैसे आग सी लग गई । " ही . . .ही इज माय ब्रदर . . ज़स्ट सी . . .ह्वॉट ससपेन्स?"

वह भयानक रूप से सक्रिय हो गया। उसने हाथों के इशारे से अपने उस भाई को बुलाया जो झुण्ड का लीडर बना हुआ था। जैसे ही वह पास आया राजा ने उससे अपनी मातृभाषा में कुछ कहा और बिना कुछ सुने उसे झन्नाटेदार कई थप्पड़ जड़ दिए। वह जो कुछ चीखता हुआ बोल रहा था, उससे पूरी राजनीतिक सभा का दम घुट गया। वह खुद भी हिल -सा गया कि यह सब अप्रत्याशित रूप से जो हुआ है, उसकी तो दूर दूर तक कोई सम्-भावना नहीं थी। सारे लड़के तितर– बितर हो गए या फिर जिसके सींग जहाँ समाए वह वहाँ लापता हो गया।
"सर , यू विल बी माय गेस्ट . . .वी विल गो टू नाम्ची ऑन मंडे . . ."

राजा लेप्चा किसी तरह भी मानने को तैयार नहीं हुआ। उसने अपनी मज़बूत सुरक्षा में उसे पूरे स्कूल कैम्पस और बाज़ार में घुमाया। हेड मास्टर और उस स्कूल के सभी शिक्षकों ने भी उसकी लापरवाह बेफिक्री देखी। लड़के तो न जाने किस खोह में जा छिपे थे। होटेल के मालिक दीपेन से सामान सुरक्षित रखने का निर्देश देकर वह उसे अपने घर , अपने गाँव ले जा रहा था। पहाड़ी पगडण्डी पर राजा आगे - आगे था और उसके पीछे चलते हुए वह सोच रहा था कि समाज हमेशा ऐसे ही रहेगा और उसी में राजा लप्चा जैसे युवक भी होंगे जो आगे चलते हुए इस संसार का भविष्य होंगे . . .

पहाड़ का सूरज अभी डूबा नहीं था . . .

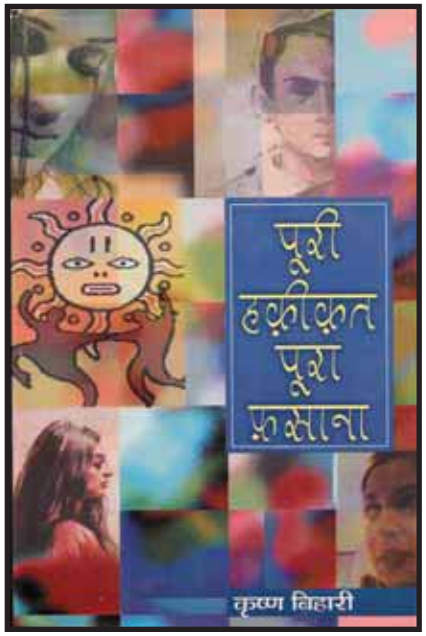

Learn Hindi!

su+bhasha KIDS HINDI

Magnetic board letter set

INTRODUCTORY SET / LEVEL 1

Includes:

* 8.5" x 11" metal board
* 49 Devanagari magnatic letters
* Sound chart on back of board

For ages 4 and up

KIDS HINDI.COM
SUBHASHA.COM
spanchii@yahoo.com
Ph. 1-508-872-0012

सम्पादक
यतेन्द्र वार्ष्णेय

गर्भनाल

garbhanal@ymail.com

GARBHANAL

प्रवासी भारतीयों की मासिक ई-पत्रिका

आपको हिंदी बोलनी आती है? तो फिर हिंदी में ही बात करिये

आप कुछ लिखने चाहते हैं? तो फिर हिंदी में लिखिये

अपनी बोली-बानी में बात करने का मंच है गर्भनाल ई-पत्रिका, जो हर माह नियमित तौर पर आपके ईमेल बॉक्स में पहुँच जाती है. इसे पढ़ें और परिजनों, मित्रों को फॉरवर्ड करें.

GARBHANAL

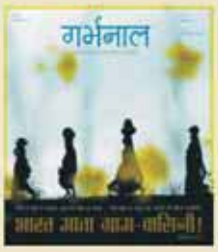

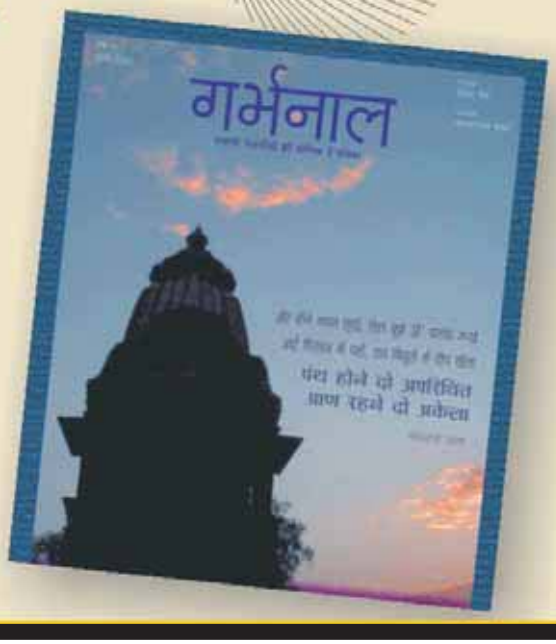

गर्भनाल के पुराने अंक उपलब्ध है.

http://hinditoolbar.googlepages.com/garbhanal

सिंधी कहानी : माई-बाप

(लेखक : सुशन आहूजा)
(अनुवाद : देवी नागरानी)

चालीस साल का दुर्बल रामू लड़खड़ाता हुआ पेड़ के नीचे उठ खड़ा हुआ, लाठी के आधार पर वो अपनी झोपड़ी की तरफ सरकने लगा। सामने पेड़ से एक नन्हा पक्षी, फड़कता हुआ उसके सर के ऊपर से गुज़रकर, आसमान की ओर उड़ा। रामू ने गर्दन घुमाकर पक्षी को देखा, पर वो उसे सिर्फ एक ही पल के लिये देख पाया, दूसरे पल वो पक्षी आसमान की ऊँचाईयों में गायब हो गया, और वो बेमतलब आसमान की ओर देखता रह गया। यकायक, बदन में एक ठंडी सिहरन के साथ, उसे एक ख्याल आया . . . मौत का ! क्या उस पंछी की फड़फड़ाहट में उसके लिये मौत का पैगाम तो नहीं था। उसके होठों पर फीकी सी मुस्कराहट आकर ठहर गई। भला, ये भी कोई नई बात होगी क्या? गुज़रे से मौत, नसीब और भगवान के ख्याल के सिवाय और कोई ख्याल उसके पास फटका भी नहीं है।

हाँ, दूसरा भी एक ख्याल जरूर है जिसने उसे अर्से में कभी-कभी उसके छोटे गंवार दिमाग़ पर भूत की तरह सवार रहा है। मुखिया के गोदाम पर धावा बोलने का। ऐसे ख्याल के वक्त शुरू-शुरू मे उसकी नसें ज्यादा तन जाती थीं, साँस तेज़ और गर्म हो जाती थी। उस वक्त तस्सवुर ही तस्सवुर में गोदाम के पहरेदारों में से चार-पाँच को अपनी लम्बी और मज़बूत लाठी से घायल करके, ज़मीन पर पछाड़ देता था पर सिर्फ चार-पाँच को, ज्यादा को नहीं, हाँ, एक दो बार, तस्सवुर पर ज़ोर देकर उसने छ-सात पहरेदारों को ज़ख्मी कर दिया, पर फिर बाकी पेहरेदारों के हाथों खुद भी लहूलुहान होकर ज़मीन पर गिर पड़ा था और उस दिन के बाद वह उसी दिन मर गया था शायद, जब भनक पड़ते ही उसे जेल भेजा गया। मतलब तो उसकी मज़बूत बाहें अकेले सर कभी मुखिया के गोदाम पर हमला न कर पाई, अनाज की एक गूनी भी हासिल न कर पाईं थी और आजकल तो उसकी निर्बल बाहों के लिये ऐसा मज़बूत जानबाज़ तस्सवुर भी नामुमकिन हो चुका था।

हिन्दुस्तान के गँवार गाँव वाले जब कभी ज़िंदगी और मौत के बीच में लड़खड़ाते हैं, तब सिर्फ किस्मत खराब होती है और भगवान रूठ जाता है। रामू ने एक खुश्क मुस्कुराहट से ऊपर आसमान की ओर निहारा और चींटी को कण, और हाथी को मन देने वाले जगत-पिता, अन्न-दाता भगवान के मुख़ातिब होकर कहा, "भगवान, गर भूख से बेहाल करके चालीस बरस में मारना था तो मुझे पैदा करने की तकलीफ क्यों की? मेरा बाप इस उम्र में दस रोटियां एक ही वक्त में खाता था, जब उसकी सारी पलकें सफेद हो गई थी तब भी वह छः रोटियां आराम से खाते रहे। क्या मेरे लिये तुम्हारे पास दो रोटियां भी नहीं हैं मेरे मासूम बच्चों के लिये एक रोटी भी नहीं है? सारे गाँव के मासूम बच्चे भूख से तड़प रहे हैं, उन पर तुम्हें दया नहीं आती? गुज़रे हुए हफ्ते गाँव में दस आदमी मर चुके हैं, अभी तक रहम नहीं आता?" पर आसमान या भगवान की ओर से आकाशवाणी के रूप में कोई भी जवाब नहीं आया, और धुंधलकी शाम के अंधेरे में दर-दर कहीं कुछ सितारे बदस्तूर बेपरवाही से आँखे टिमटिमाते रहे।

लाठी के आधार पर लड़खड़ाते रामू अपनी झोपड़ी के पास पहुँचा तो उसे अजब लगा। गरीबों के झोपड़ों द्वार भी कभी बंद रहे हैं? दो हांडियों और एक चटाई को भी कहीं चुराए जाने का खौफ रहा, वो भी शाम के वक्त, आजकल उसका परिवार भी और परिवारों की तरह मौत के दिन गिन रहा था।

दरवाज़ा खड़का और दरवाज़ा खुला, जिसके खुलते ही एक तेज़ ज़ायकेदार खुशबू आकर उसकी नाक से टकराई। रामू ने दो-तीन बार "सूं-सूं" करके खातिरी की और उसकी नस-नस में जिंदगी की हरारत दौड़ आई। बीवी को थैला देते वह जलते हुए चूल्हे और चूल्हे पर रखी कढ़ाई की ओर लपका। हर उसकी अजब में डूबी खुशी की आवाज़ "रोटी ! रोटी !!" हल्की चीख में बदल गई जब वह खुद को संभाल न पाया और जमीन पर गिर गया। गंगा, जिसने रामू के पीछे दरवाज़ा बंद कर लिया था, एकदम रामू को ज़मीन से उठाने लगी, पर रामू दुखती-कराहती हड्डियों की परवाह न करे हुए ज़मीन पर बैठा रहा और खुश्क ज-बान से सवाल किया "यह जीवन-रस किसने देखा है?", "सुनाती हूँ, आप उठिये तो सही। "पर रामू खुद ही चूल्हे की तरफ सरकता रहा और मैले कपड़े पर पड़ी दो गर्म रोटियों के ऊपर दोनों हाथ रखकर, फिर लेट गया। लेटे रह मुँह जमीन से लगाकर, रोटियों को हाथों से लपेटते, खोलते वह शायद भूल गया कि उसने सवाल किया था कि वह जीवन-रस किसने दिया है, या शायद अब उसे उस जवाब की गरज या इन्तज़ारी नहीं रही पर गंगा को थी, जिसने सुनाना शुरू किया : "सुनते हो मुखिया के बेटे गोविंद के पांव में मोच आ गई है।"

"हूँ? हाँ. . . फिर, चलो अच्छा हुआ !" सर थोड़ा ऊपर उठाकर रामू फिर गरम गरम रोटियों को लपेटता, खोलता रहा, अब उसने नाक से दो-तीन लंबी सांसे लीं।

"बदरी प्रसाद आया था मुझे बुलाने, मालिश के लिये"

"शामू ने, गोपू ने रोटी खाई है?"सुना अनसुना करते रामू ने पूछा

"जी हाँ, बहुत दिनों के बाद रोटी नसीब हुई, इस कारण खाने से ही एक नशा उन्हें घेरे रहा। खाते ही नींद आने लगी, अब सोए हैं।"

"नहीं, नहीं बाबा, मैं अभी जाग रहा हूँ, मुझे नींद नहीं आ रही है।" रामू के बड़े बेटे ने कहा।

"क्यों शामू"

"बाबा, मैं सोच रहा हूँ कि कल नहीं तो परसों गोबिंद का पैर ठीक हो जाएगा, फिर खाना कहाँ से लाएंगे? उसके सिवा गाँव के और आदमी कब तक घास पत्तों पर जी सकेंगे? इस गाँव में तीन दिनों में पाँच आदमी पेट के दर्द के कारण मरे हैं। कहते हैं बिहार के गाँव-गाँव का यही हाल है।"

"सो जा !" रामू ने प्यार से झिड़क दिया। उसे शामू की वो बेवक्त की फिलासिफी नहीं भाई। इस वक्त उसे अपनी ही सोच का

अंदाजा भा रहा था। दो दिनों के लिये ही सही, जिंदगी को या मौत को कुछ खींच तो सकते थे। सिर्फ दो दिन ही क्यों? दो दिन खाकर, दो हफ्ते और भी मौत का इंतजार किया जा सकता है। रोटियों को हाथ में दबाते, रामू सोच रहा था, और उसी बीच सरकार, माई-बाप, जरूर कोई न कोई बंदोबस्त कर लेगी - थाने-दार और मुखिया ने तो एक दो दिन का आसरा दिया है . . . " पर वहीं रामू के चहरे का रंग फीका पड़ गया, अपने आप से कह बैठा" पर वो तो थे। एक दो दिन का आसरा, दो महीनों से देते रहे हैं और इसी बीच गांव के दस आदमी मर गए हैं जो तीन महीने पहले मुझ जैसे शेर मर्द थे। तीन मुझ जैसे शेर मर्द भूख में मर गए !

"पर रामू नहीं मरेगा", उसने खुद से कहा और हाथ में लिपटी हुई रोटियों का एक बड़ा निवाला काटा। "हाँ रामू नहीं मरेगा, बस नहीं मरूंगा।" खुद को भरमाते हुए, मुँह को चलाते हुए, आँखों को मटकाते हुए वह फुसफुसाता रहा। यहाँ उसे गंगा की हाज़िरी का अहसास हुआ, जो टकटकी बाँधे उसे देख रही थी।

"तूने भी खाई है न रोटी?" रामू ने पूछा।

"तुम खाओ, मुझे भूख नहीं है। बदरी की बीवी ने जोर करके खिलाया, आधी रोटी से ज्यादा न खा सकी। डर था कहीं कुछ हो न जाए। बहुत दिनों के बाद ऐसे एकदम से ज्यादा खाया जाता है क्या?"

"पगली, दो-तीन रोटियाँ खाकर आती।"

"हाँ, माँ खाकर आती ना !"

"तुम, अभी तक जाग रहे हो?"

"हाँ बाबा, मैं अभी तक सोच रहा हूँ. . ."

"बांवले, अभी तक क्या सोच रहे हो?" रोटियों से एक और छोटा निवाला काटते रामू ने पूछा -

"बाबा, सरकार को माई-बाप क्यों बुलाते हैं?"

"क्योंकि वो माँ-बाप की तरह सार-संभार लेती है।"

"पर आपने खुद खाने से पहले अम्मां से हमारे बारे में पूछा, और अम्मां ने तो अभी तक खाया नहीं, क्या सरकार. . ."

"जहन्नुम में पड़े तेरी सरकार और उनके साथ तू भी। मैं पूछता हूँ इतनी गहराई से तुम सोचते ही क्यों हो? और उसने तीसरा निवाला रोटी का लिया।"

"पर बाबा, मैं कहाँ जानबूझकर से सब सोचता हूँ। भूख में खुद ही ऐसी बातें दिमाग में दौड़ कर आती हैं।"

"बहुत बड़ा दिमाग है न बांवले" रामू ने निवाला गले के नीचे उतारते हुए अपने "जहन्नुम" की कही कड़वी बात पर प्यार का हल्का रंग चढ़ाते कहा।

उसको सच में ही शामू के साथ लगाव था, गाँव के और गंवार जवानों की भेंट में शामू की समझ लाशानी थी। शामू की इ सी बात पर रामू को गर्व था । जैसे एक बाप को अपने सहारे पर नाज़ होता है, जिसमें शामू की दो मज़बूत बाहें भी शामिल थीं। उसे शामू के उस प्यार से भी प्यार था जो माँ और छोटे भाईयों पर भी न्यौछावर हो जाता था। प्यार से कुर्बानी उत्पन्न होती है, यही कुर्बानी प्यार की गहराइयों को पार करके कभी कभी तड़प सी उठती है, इज़हार के लिये। रामू और गंगा का इस वक्त यही हाल था। इज़हार की तड़प जब इनतहा की ओर बढ़ी तो और कुछ न कहकर फ़कत किसी को 'बांवला' ही पुकार सका। रामू ने गंगा की ओर देखा। उसने सब कुछ सुना था। उसके चेहरे पर गर्व और प्यार झलक रहा था..." माँ-बाप का गर्व और प्यार।"

रामू कुछ सरककर गंगा के साथ सटकर बैठा। फिर 'अधूरे इज़हार' ने गंगा के कांधों पर बाँहें डालीं, फिर उन बाकी बची रोटियों वाली मुट्ठी उसके मुँह के आगे लाई। मुँह से लगाई और आहिस्ते-आहिस्ते दबाता रहा। गंगा के सामने अब अपनी कुर्बानी का सवाल नहीं रहा था। आखिरी निवाला निगलते हुए जाने कितने सालों के बाद, गंगा ने रामू की उंगली को हल्के से काटा। काटकर वह छलक उठी ! टप, टप, टप . . . आँसू, और फिर . . .सिसकियाँ।

शामू ने, जिसने पिता को माँ की तरफ सरकते देखा। करवट बदल ली थी। सिसकियों की आवाज़ पर गर्दन उठाकर देखा। पर माँ को पिता की गोद में देखकर, उसने गर्दन फेर ली . . . और गर्दन को फेरने के साथ-साथ शामू को रोना आ गया।

****

लघुकथाएँ –

माँ नहीं जानती फ्रायड

बलराम अग्रवाल (भारत)

"माँ" जैसे कुछ देखा ही न हो वैसे पुकारते हुए वह माँ के कमरे की ओर बढ़ा, ताकि उसके पहुँचने तक माँ सँभलकर बैठ जाए। लेकिन माँ ज्यों की त्यों बैठी रही।

"श्श्श्श्श!" अपने होठों पर तर्जनी को खड़ी करने के बाद उसने हथेली के इशारे से उसे आवाज़ को धीमी रखने का इशारा किया।

माँ का इशारा पाकर वह दोबारा नहीं चीखा।

"यह क्या कर रही हो माँ!" माँ के पास पहुँचते-पहुँचते उसने लगभग उग्र स्वर में सवाल किया।

"धीमे बोल ... बड़ी मुश्किल-से आँखें लगी हैं बच्ची की, जाग जायेगी" उसके सवाल का जवाब दिए वगैर माँ ने फुसफुसाकर उसे डाँटा।

"मैं पूछ रहा हूँ ये कर क्या रही हो?" भले ही फुसफुसाकर, लेकिन उग्र स्वर में ही उसने अपने सवाल को दोहराया।

"देख नहीं रहा है ?" माँ ने मुस्कराकर कहा।

"देख रहा हूँ इसीलिए तो पूछ रहा हूँ।"

"सीमा से जो काम नहीं हो पा रहा है, वह कर रही हूँ"

"कैसी तोहमत लगा रही हो माँ ।" वह पत्नी का पक्ष लेते हुए बोला,"एक घण्टा पहले खुद मेरी आँखों के सामने पिंकी को दूध पिलाया है उसने।"

"दूध पिलाया है छाती से नहीं लगाया" माँ मुस्कराते हुए भी गंभीर स्वर में बोली," बोतल मुँह में लगाने से बच्चे का सिर्फ पेट भरता है, नेह नहीं मिलता ।"
माँ की इस बात का वह तुरन्त कोई जवाब नहीं दे पाया।
"एकदम चुड़ी हुई, बुढ़ापे की छातियाँ हैं बेटे।" सो चुकी पिंकी को आँचल के नीचे से निकालकर बिस्तर पर लिटाते हुए माँ ने अपने बयान को जारी रखा, "दूध एक बूँद भी नहीं है इनमें; लेकिन नेह भरपूर है।"
माँ की सहजता को देख-सुनकर उसमें उसे थोड़ी देर पहले के अपने संकोच के विपरीत ममता भरी युवा-माँ दिखाई देने लगी।
"तू जो इतना बड़ा होकर भी माँ-माँ करता चकफेरियाँ लगाता फिरता है मेरे आसपास, वो इन छातियों से लगाकर पालने का ही कमाल है मेरे बच्चे ।" उसके सिर पर हाथ फिराकर माँ बोली, "छाती से लगकर बच्चा हवा से नहीं, माँ के बदन से साँस खींचता है, तू पिंकी की फिक्र मत कर, इसे मैं अपने पास ही सुलाए रखूँगी जा"।

माँ की इस बात को सुनकर उसने अगल-बगल झाँका। वहाँ सिर्फ वह था और माँ थी। "माँ!" वह सिर्फ इतना ही बोल पाया। सदा-सदा से पूजनीया माँ की इस मुद्रा को देखकर उसके गले में तरलता आ गई। इस युवावस्था में भी माँ के आगे वह बच्चा ही है – उसे लगा; और यह भी कि वृद्धा-माँ में युवा-माँ हमेशा जीवित रहती है।

****

अपने ही मन से जूझते हुए

बलराम अग्रवाल

वे दरअसल बचपन से ही यह खेल देख रहे थे। इस खेल के खिलाफ उनके मन में सवाल उभरते और दब जाते। माँ से कुछ पूछने की उनकी हिम्मत ही नहीं होती थी। सवाल मन में उठते ही पहला दूसरे की, दूसरा तीसरे की और तीसरा पहले की आँखों में झाँकता और खालीपन देखकर चुप रह जाना ही बेहतर समझता। यही हालत माँ की भी थी। वह बच्चों की सवालजदा आँखों को देखती और सहम-सी जाती। इस तरह माँ और बच्चे दोनों ही अपने-अपने मन के तूफानों से जूझते-झगड़ते जी रहे थे। आखिरकार वे इतने मजबूर हो गए कि एक सुबह बर्तन माँज रही माँ के मन ने बच्चों को अपने सामने खड़ा पाया।
"क्या कर रही हो माँ" तीनों ने एक साथ पूछा।
सवाल सुनकर माँ ने जवाब नहीं दिया। उनकी ओर देखकर मुस्कराभर दी और काम में लगी रही।
"बताओ न माँ!"
"देख रहे हो न, बर्तन माँज रही हूँ" पतीली को जूने से रगड़ती माँ ने जवाब दिया।
"खाना तो आज बना ही नहीं था ?" बड़े ने पूछा।
"न बना सही" माथे पर गिर आई बालों की लट को राख-सने हाथ से ही सिर पर सरकाते हुए माँ ने कहा।
"जूठे बर्तन ही तो माँजकर साफ किए जाते हैं न माँ" मँझला बोला।
"जूठे नहीं गंदे।" माँ दो-टूक बोली।
"रात ही तो इन्हें माँजकर रखा था तुमने"। इस बार छोटा आगे आया," सुबह खाना बना नहीं, फिर गंदे कैसे हो गये ?"
इस बीच पतीली को भीतर-बाहर हर तरफ से रगड़ चुकी थी माँ। उनके भोले चेहरों को उसने पढ़ लिया। पास रखी बाल्टी के पानी में उसने फटाफट अपने हाथ धोए और उनसे जा लिपटी। उसकी सुबकन को महसूस कर उनको लगा कि उनसे गलती हो गई है।

"गलती हो गई" बड़ा अपराध-बोध के साथ बोला, "माफ कर दो माँ।"
इस बात पर माँ ने अपना आँसू-भरा चेहरा उसकी ओर उठाया। मोटे-मोटे आँसू दो-दो कर धार की शक्ल में उसकी आँखों से ढुलक पड़े। शब्द उसके कण्ठ में अटक गये, तुरन्त कुछ बोल न सकी। "गरीब घरों में बर्तन माँजे नहीं जाते मेरे बच्चो, खनकाए जाते हैं, पड़ोसियों को यह जताने के लिए कि घर के सब लोग खा-पी चुके, अब बरतन मँज रहे हैं।" कुछ देर बाद खुद को संयत कर उसने बोलना शुरू किया,"हमारे घरों की मोरियों पर भी निगाह रखते हैं लोग। सुबह-शाम बरतन तो खनकते रहें लेकिन मोरियाँ सूखी पड़ी रहें! ऐसा नहीं हो सकता न? इसलिए"
बच्चों को आश्वस्त कर वह पुन: बरतनों में जा घुसी सुबकती हुई। बच्चे हालाँकि अब भी वहीं बैठे थे और मन में उपजते अनेक सवालों से पहले की तरह ही जूझ रहे थे।

****

गो भोजन कथा

बलराम अग्रवाल

"याद आया," गऊशाला से भी निराश निकलते इन्दर ने पत्नी को बताया, "अपना बशीर था न वही , जो हाल के दंगों में मारा गया। उसकी गाय शायद गर्भिणी है।"
"छि:!"
"कमाल करती हो!" इन्दर तमतमा गया, "बशीर के खूँटे से बँधकर गाय, गाय नहीं रही, बकरी हो गयी? याद है, दंगाइयों के हाथों उस गाय को हलाक होने से बचाने के चक्कर में ही जान गई उस बेचारे की।"

"दो –चार , दस-पाँच दिन का समय दिया होता तो कहीं और भी तलाश कर सकते थे हम" उसकी उपेक्षापूर्ण चुप्पी से क्षुब्ध होकर वह पुन: बोला, "शुभ मुहूर्त् है !आज ही से शुरू करना होगा!! पड़ गई साले ज्योतिषी के चक्कर में।"
चुप रही माधुरी, क्या कहती! सन्तान-प्राप्ति जैसे भावुक मामले में बेजान पत्थर और अव्वल अहमक तक को पीर-औलिया मानकर पूजने लगते हैं लोग। यह तो गाय थी, सजीव और साक्षात्। बशीर की ही सही। घर पहुँचकर उसने हाथ-मुँह धोए। लबालब तीन अंजुरीभर गेहूँ का आटा एक बरतन में डाला, तोड़कर गुड़ का एक टुकड़ा उसमें रखा और साड़ी के पल्लू से उसे ढाँपकर चल पड़ी बशीर के घर की ओर।
गाय बाहर ही बँधी थी, लेकिन गर्भिणी होना तय करने से पहले

उसको कुछ देना माधुरी को ज्योतिषी की सलाह के अनुरूप नहीं लगा। सो, साँकल खटखटा दी। सूनी आँखों और रूखे चेहरे व-ाली बशीर की विधवा ने दरवाज़ा खोला। देखती रह गयी माधुरी यह थी ही ऐसी रूखी-सूखी या ! इन्दर तो एक बार यह भी बता-ते थे कि बशीर का बच्चा इसके पेट में है!
"क्या हुक्म है?"
"माधुरी हूँ, इन्दर की पत्नी"। कभी गाय के तो कभी बशीर की बीवी के पेट को परखती माधुरी जैसे तन्द्रा से जाग उठी "आटा लाई हूँ ज़्यादा तो नहीं, फिर भी अपनी हैसियत – भर तुम्हारे लिए जो भी बन पड़ेगा, हम करेंगे बहन।" बरतन के ऊपर से पल्लू हटाकर उसकी ओर बढ़ाते हुए उसने कहा, "संकोच न करो रख लो बच्चे की ख़ातिर ।" बशीर की विधवा ने चूनर को अपने पेट पर सरका लिया और फफककर चौखट के सहारे सरकती हुई, धीरे-धीरे वहीं बैठ गयी।

****

टेक केयर

प्रेम नारायण गुप्ता (भारत)

वर्माजी बहुत खुश थे कि उनका बेटा विकास अच्छे से सैट ल हो गया था। अब तो विकास ने मुंबई में अपना फ्लैट भी ले लिया है और बच्चों के साथ मज़े से वहीं रह रहा है। वर्मा दंपती अब क़ाफी बूढ़े हो गए हैं और अक्सर बीमार रहते हैं। पेंशन के जिन रुपयों से गृहस्थी चल जाती थी अब वो कम पड़ने लगे हैं क्योंकि मँहगाई, दवाएँ और फलों का खर्च बजट बिगाड़कर रख देता है।

माँ ने फोन करके बेटे को घर बुलवाया तो वो छुट्टियों में पिता की बीमारी का हाल-चाल जानने चला आया। माँ-पिताजी बेटे को देखकर बहुत खुश हुए और बहू और पोते-पोती को साथ न लाने पर नाराज़ भी हुए। आज बरसों बाद रसोई में कई चीज़ें एक साथ बनीं और बेटे को ख़ूब खिलाया-पिलाया।

बेटे ने पिता से पूछा, "अब तो दिल्ली में प्रापर्टी के दाम बहुत बढ़ गए हैं। अपना मकान कितने का चल रहा है?" ये सुनकर वर्माजी को अच्छा नहीं लगा और वो सुना-अनसुना कर गए। अगले दिन जाते हुए बेटा बोला, " टेक केयर पापा।" मिसेज वर्मा की आँखें आँसुओं से भीग गईं और वे सोचती रहीं, " बट हू विल टेक केयर?"

****

युग बदल गया

प्रेम नारायण गुप्ता (भारत)

कल एक अजीब घटना घटी और पूरी दुनिया बदल गई। हुआ यूँ कि कल भगवान का वो कम्प्यूटर खराब हो गया जिसमें हमारे गुनाहों का हिसाब रखा जाता था। इस खराबी के कारण सभी मानव मस्तिष्कों तक ये सूचना संप्रेषित हो गई कि अब भगवान हमारे गुनाहों का हिसाब नहीं रख पा रहा है। देखते ही देखते दुनिया भर के लोग एकदम बदल गए और दुनिया में पाप और अपराध की बाढ़ आ गई। सरकारें चिंतित हुईं और निर्णय लिया गया कि सभी पुराने क़ैदियों की सज़ा माफ कर उन्हें रिहा कर दिया जाए और नए अपराधियों को जेल में डाल दिया जाए क्योंकि अपराधियों को देखते हुए जेलखाने कम पड़ रहे थे।

धीरे-धीरे सब शांत हो गया। दुनिया पहले से खुशहाल हो गई है। सतयुग आ गया है कल युग बदल गया है।

'मदिरालय' मेरी दृष्टि में' (पुस्तक समीक्षा)

श्रीनाथ प्रसाद द्विवेदी – सरी–वैंकुअर(कैनेडा)

'मदिरालय' महाकवि प्रो. हरिशंकर आदेश द्वारा रचित काव्य ग्रन्थ है,जिसका परिवर्धित रूप नटराज प्रकाशन, दिल्ली ने 2007 में प्रकाशित किया है। इस संवर्धित संस्करण में 179 चतुष्पदियाँ हैं। नि:संदेह मदिरालय शीर्षक काव्याभिव्यक्तियों की दृष्टि से समीचीन तथा सार्थक है।

गौर तलब है कि मदिरा, साकी और मदिरालय संबधी विषयों में अरबिक, फारसी और उर्दू भाषाओं के अनेकानेक स्वनाम धन्य कवियों ने अपनी पैनी लेखनी से लोकप्रिय शायरी का सृजन किया है। यही नहीं कतिपय हिन्दी रचनाकारों के भी साहित्य में यदाकदा इसकी झलक मिल जाती है।

मैं गोयनका जी की इस धारणा का पक्षधर नहीं कि - 'आदेश जी का 'मदिरालय' बच्चन जी के 'मधुशाला' का पूर्णत: अस्वीकार है.....' बच्चन जी ने 'मधुशाला' से जो प्रसिद्धि प्राप्त की थी उसे चुनौती देना.....'जबकि इसके विपरीत स्वयं आदेश जी ने स्वीकारा है- 'मुझको न किसी के प्रति बैर-भाव, मुझको न ईर्ष्या-द्वेष, न भय'। (176)यही नहीं चाहे वह उनके अवयस्क जीवन के निजी अनुभव हों- 'मैंने अपने शैशव एवं कैशोर्य काल में अपने पड़ोस में पिशाचिनी मदिरा का जो प्रलंयकर तांडव नृत्य देखा था.....'(पूर्व पीठिका पृ.14) अथवा संगीत, कला और साहित्य से जुड़े रंगमंचों में मदमस्त कलाकारों के अवांछनीय व्यवहार का -

'कुछ कवि या गायक मंचों पर, आजाते हैं पी मादक पय।
गिरते-पड़ते लड़खड़ा बने, प्रहसन से लगे हास्य-विषय (86 चतु.)

'हर कला वासना बन जाती, हर योग भोग बन जाता है' (10)

या फिर झुग्गी-झोपड़ी के निवासियों की मदिरा के लत से उत्पन्न स्थिति आदि के -

'करती है भूख नाच नंगा, झुग्गी - झोपड़ी-छप्परों में,
देते हैं बना श्मशान घरों को, आए दिन ही मदिरालय' (109)

इन मर्मान्तक विनाशकारी दृश्यों ने संवेदनशील कवि को विचलित किया है इसलिये उनकी आन्तरिक वेदना, हलचल, झुलसन और छटपटाहट की सहजानुभूतियों की तरल अभिव्यक्ति

का प्रतिफल है यह नायाब दस्तावेज-'मदिरालय'। यह सोचना कि आदेश जी की इस कृति का आधार प्रतिक्रिया अथवा प्रतिशोध है, नितांत संज्ञाशून्य तर्क है।

आदेश जी ने मदिरा के कुप्रभावों की लम्बी फेहरिस्त पेश की है जैसे-'पशुता को प्रश्रय देती', 'नैतिकता की हत्या', 'नास्तिकता का उदययोग भोग बन जाता', 'इज्ज़त का सौदा', 'तन मन धन का विनाश', 'जन जीवन के सुख-समृद्धि की जड़ काटना' आदि। अत: वे मदिरा के भयंकर परिणामों से मुक्ति के लिये शखनांद करते हैं और इस तरह एक योगी साहित्यकार के रूप में हमारे सामने आते हैं। उनका संकल्पी मन मानवता विरोधी मान्यताओं और हितों के विरुद्ध अपनी पूरी संकलित ऊर्जा तथा चेतना के साथ संघर्ष के लिये तैय्यार हो जाता है और वे फिर अकाटय तर्कों के प्रक्षेपास्त्रों का उपयोग करना नहीं भूलते उदाहरणार्थ ये पंक्तियाँ-

'पीती यदि गर्भवती मदिरा, यह अंगूरी आसव या मय।
होती संतान विकृति, रोगी, अथवा विकलांगन
'कुछ संशय', (48), की भक्ति हो गई क्षय'। (36), 'अनेक रोगों की, मदिरा जिसको कहते मधुमय।' (35)
'करते उत्पन्न सदा जग में, दारिद्रय-दौख-दीनता-अनय'। (63)
आदि

उनका यह जुझारूपन प्रत्येक रूबाई में स्पष्टत उभरता है। ऐसा लगता जैसे कवि बुनियादी सवालों के उत्तर ढूढ़ने की जद्दोजहद में लगे हैं। देखा जाय तो संस्कृति को प्रश्नांकित करने का उनका यह अपना अंदाज़ है।

आदेश जी ने भोगवाद, बाजारवाद, हालावाद और उपयोगितावाद के दुर्निवार आकर्षण से आक्रांत मानसिकता, जो भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों और उदात्त जीवन शैली को लीलना चाहती है, के प्रतिरोध में पाठकों को शुतावादी तथा जनकल्याणवादी विचारधारा के माध्यम से उल्लसित और ऊर्जस्वित करते हैं। इसके अलावा वे यथास्थितिवादियों के प्रखर विरोध में समाज विमर्श के प्रबल प्रवक्ता के रूप में हमारे सामने आते हैं और यही नहीं उनके चिंतन-मनन तथा जीवनदर्शन की विराटता पाठक के मन में गहरे नक्श छोड़ते हैं।

शिक्षित एवं तथाकथित उच्चवर्ग में मदिरा को प्रतिष्ठा के रूप में अंगीकार करनेवालों को वे लताड़ना नहीं भूलते -

'नूतन सभ्यता, उच्च स्तर के, बनकर प्रतीक करते हैं क्षय।
नैतिकता, चारित्रकता, संस्कृति, मानवता का नित निर्भय।'(54)

कवि की नज़रों में जीवन की यथार्थता से मुँहमोड़ने, प्रतिकूल परिस्थितियों से भागने, मधुर सम्बंधों से पीछा छुड़ाने का एक बहाना और कायरता-भगोड़ेपन का सबल प्रतीक है, मदिरा और कुछ नहीं-

'जीवन से सदा पलायन का, ही पाठ पढ़ाते मदिरालय'। (7)
अथवा
'कापौरूष और भीरूता के, हैं एकमात्र आश्रय-आलय।'(22)

वे लोग जो यह सोचते हैं कि मदिरा से सुख-आनंद की प्राप्ति होती है, यह उनकी सोच का भ्रम है और कवि इस भ्रम को खंडित करते हैं-

'लोभी प्रतिनिधि मदिरालय के, झूठा बहलावा देते हैं' (17) इसके विपरीत
'हर चिन्ता बढ़-बढ़ जाती है, हर दुख दूना हो जाता है' (18)

और फिर जब नशा उतरता है तब व्यक्ति मन के कसैलेपन तथा तन के भारीपन-टूटन को झेलने के लिये विवश हो जाता है, यही उसके जीवन की विडंबना है।

मदिरापान न केवल मांस भक्षण, वेश्यावृत्ति, विलासिता, कामुकता और अनैतिक आचरण को प्रोत्साहित करता है -

'मदिरा के साथ मांस-भक्षण, की परंपरा चलती निश्चय।
मदिरा से ही पोषित होते हैं, जग में सारे वेश्यालय।
कितनी नृशंसता बलात्कार, मदिरा ही प्रेरित करती है (33)

अपितु यह मानव में आर्थिक विपन्नता, शारीरिक बीमारियों और मानसिक विकृतियों को जन्म देता है - (78, 79, 84, 93)

आदेश जी ने तर्कों की पुष्टि के लिये अपनी 40 से 47 तक की चतुष्पदियों में उन अनेकानेक भारतीय तथा विदेशी नेताओं, साहित्यकारों, कलाकारों और वैज्ञानिकों का नामोउल्लेख किया है जिन्होंने मदिरा से बहुत दूर रहकर भी स्मरणीय तथा महान कार्य किये हैं। उनकी निगाह में यह सच है कि उत्कृष्ट साहित्य सृजन, ऐतिहासिक अनुसंधान और लोकप्रिय प्रशासन मदिरा का मोहताज नहीं।

आदेश जी, भारतीय संस्कृति को बोनसाई बनता, समाज को विश्रृंखलित होता मानवता का क्षय होता देखकर मात्र ,दर्शक-दीर्घा में बैठकर चुप्पी नहीं साधते बल्कि अविचारित पलायनवादी वृत्ति को धिक्कारते और मदिरालय के भ्रम के तामझाम को फेंककर क्रियात्मक और सुधारात्मक सुझावों की जोरदार पहल करते हैं। आदेश जी समाज के ठेकेदारों, धर्मधुरंधरों और साहित्यकारों को जमकर झकझोरते हैं और उनका आवाहन करते हैं कि वे सभी मदिरालयों को बंद कराने, सात्विक धर्माचरण का उपयोग कराने और सत्यं-शिवं साहित्य के सृजन की दिशा में अग्रसर हों वे उन्हें ललकारते हैं -

'ओ सर्व श्रेष्ठ पुरूषों जागो! उठ करो विश्व की रक्षा तुम' (152)
'कवि दृष्टा होता है भविष्य का, जन-हित ही हो जिसका बाल-समय'(155)
'मैं विविध् कला विज्ञान, शास्त्र के खोलूं अनगिन विद्यालय
जिसमें सद् शिक्षा पा विकसित हो आने वाला बाल-समय।'(168)

इसमें संदेह नहीं कि आदेश जी तर्क और ज्ञान के छक्के मारने में सिद्धहस्त हैं।

उनमें संत कवि कबीर सा जोश-खरापन और महाकवि निराला (जागो!फिर एक बार) जैसी हुंकार है। इस कृति में यदि पाठकों को 'सर्वे भवन्तु सुखिन', 'उतिष्ठित, जाग्रति प्राप्यवरान्बोध्ति' और 'कल्याणम् करोति' दार्शनिकता की अनगूजें मिलें जो कोई आश्चर्य नहीं।

आदेश जी ने छंदहीन कविता की बखिया उधेड़ी है परन्तु इससे तो आँखें नहीं मूंदी जा सकतीं कि अनेक बहुचर्चित तथा लोकप्रिय साहित्य के हस्ताक्षरों जैसे डब्लू बी यीट्स, टी एस इलियट, निराला, अज्ञेय और फैज़ आदि ने इस विधा का सफल तथा सार्थक प्रयोग भी किया है। उसी प्रकार उन देशों में जहाँ मदिरापान समाजीकरण का प्रचलित आधार है चाहे वह फ्रान्स, जर्मनी, स्पेन, इटली अथवा ग्रीस आदि देश हों वहाँ भी साहित्य, कला, संगीत और विज्ञान के क्षेत्र में विश्वस्तनीय कार्य

हुआ है जिसे तो झुठलाया नहीं जा सकता। यदि यह माना जाय कि आदेश जी ने मदिरा के अतिशय-अमानवीय क्रूर प्रभावों को केन्द्र में रखकर अपनी प्रतिक्रियाएं व्यक्त की हैं तो यह सरलीकरण कुछ अटपटा नहीं लगेगा। आदेश जी की विशेषता है कि वे अपनी बात उदात्त ढंग से प्रस्तुत करते हैं। उन्होंने अपने भावों को इस सलीके से परोसा है कि उनकी कविता में झुंझलाहट, आवेश और बौखलाहट के चिन्ह नहीं दिखते। वे एक सफल गोताखोर की तरह मदिरालय के गहरे सागर में डूबकर यथार्थ-सत्य के मोती चुनते हैं जिनमें सहजमन के पारदर्शी भावों की लकीर * स्पष्टत: परिलक्षित होती हैं।

आदेश जी की अद्भुत कलात्मकता का आधार उनकी भाषा और छंदशास्त्र की दुरुस्त पकड़ है जिसका ही शायद यह सुखद परिणाम है कि चतुष्पदी की गीतात्मकता तथा छंदबंधता

में खरोंचें और झोल नहीं आ पाया है। कवि ने स्तरीय साहित्यिक खड़ी बोली का प्रयोग किया है परन्तु कुछ उर्दू और लोक भाषा के शब्द भी आ मिले हैं जिनके काव्य प्रवाह में कोई गतिरोध नहीं आया। उन्होंने कई क्लिष्ट शब्दों का प्रचलित अर्थ देकर कविता को अप्रयुक्त शब्द दोष से बचा लिया है। कवि ने कई मुहावरों जैसे-'तीन पाँच' (97), 'छठ आठै का बैर सदा' (41) और मिथकों-'सागर मंथन' (82) आदि का सफल प्रयोग किया है। विभिन्न जीवनानुभवों से जुड़ी घटनाओं के उदाहरणों , सामाजिक विवरणों और व्यंग्य के तीखे प्रहारों से कवि ने अपनी काव्यकृति-'मदिरालय' को बासी जकड़बंदियों तथा उबकाऊपन से मुक्त रखा है। यद्यपि 'मदिरालय' में ओज गुण का आधिक्य है किन्तु इसमें प्रसाद गुण की रसीली घुलावट भी है।

इस काव्यसंग्रह में रौद्र, शान्त, विभत्स और करूणा रस के चटकीले-गहरे रंग बिखरे हैं बानगी के तौर पर इनका स्वाद लें -

'आकर देखो उस कोने में, वह पड़ा हुआ है पी कटु पय।
आ अगिन मक्षिकाएँ मुख-तन, पर करती हैं विश्राम अभय।
इस कोने में भी श्वान धो रहा, है मुख उस दीवाने का' (25)

'विभत्स', 'वश चले अगर मेरा जग में, रोकूं मद-प्रेरित महाप्रलय।
दू दंड कठिनतम निसंकोच, हाला उपासकों को निश्चय।
हाला-बाला भक्तों को दूं आजीवन कारावास कठिन' (169) 'रौद्र'
संगीत शरण देगा तुमको, कर देगा सचमुच शान्त हृदय।
हरि-भक्ति भरेगी जीवन में, सुख का भंडार अगम अक्षय।
हर जीवन-मात्रा-हित प्रेम करेगा, हर मन का बहका मदिरालय।।
(173) 'शान्त'

यह कहना अतिरेक न होगा कि आदेश जी के इस काव्य संग्रह के भावों की सावनी धूप में उनके शिल्प की बूदें झिलमिलाती सी दिखती हैं। अंत में मैं यही कहूगा कि आदेश जी ने सांस्कृतिक, सामाजिक आलोड़नों -हलचलों, क्रूरऔर कड़वी सच्चाइयों,
परिवार के चरमराते सम्बधों और नैतिकता के पतनोन्मुख रवायातों को शब्द दिये हैं और दी है पहचान।

****

एक परिचय

श्रीमती साध्वी बाजपेयी - *आशा बर्मन*

श्रीमती साध्वी बाजपेयी एक प्रतिभाशाली तथा समर्थ महिला हैं, जिनका सम्मान श्रीमती ऊषा अग्रवाल ने 9 मई, 2009 को अपने भव्य निवासस्थान पर किया। 83 वर्षीय साध्वी जी ने नाटक तथा अन्य संगीत अनुष्ठानों के द्वारा कनाडा की विभिन्न दातव्य संस्थाओं को लगभग 100,000 डॉलर दानस्वरूप दिया। इनसे प्रभावित होकर कनाडा के गवर्नर जनरल ने इन्हें 'केअरिग अवार्ड ' प्रदान किया। साध्वी जी टोरोंटो तथा इसके निकटवर्ती क्षेत्रों में हिन्दी के सुन्दर नाटकों के निर्देशन तथा मंचन के लिए प्रसिद्ध हैं। एक बार जो इनका नाटक देख लेता है, अगले नाटक की प्रतीक्षा करने लगता है। यहाँ के यंत्रचालित जीवन से उबरने के लिये हम प्रवास भारतीय सदैव स्वस्थ मनोरंजन के उत्तम साधनों की खोज में रहते हैं। ऐसे तो कई प्रवासी भारतीय सांस्कृतिक कार्यों द्वारा भारतीय भाषा, संगीत, नृत्य, नाटक के प्रसार में संलग्न हैं पर साध्वी जी उन विरल लोगों में से हैं, जिनके प्रयासों से कनाडा का सम्पूर्ण जनसमाज प्रभावित तथा लाभान्वित हुआ है।

इन्होंने 1990 में ओन्टेरियो के किचनर-वाटरलू के क्षेत्र में 'तरंग' नामक एक संस्था का संगठन किया। इसी संस्था ने हिन्दी के नाटक तथा संगीत कार्यक्रमों का आयोजन कर, विपुल धनराशि अर्जित कर जिन दातव्य संस्थाओं को दिये उनके नाम हैं - हार्ट एंड स्ट्रोक फाउन्डेशन, कैनेडियन कैंसर सोसाईटी, आर्थराईटिस सोसाईटी, होम्स फार अब्यूज़्ड विमेन एंड चिल्ड्रन इत्यादि। यह संस्था अभी भी सक्रिय है। 1990 से अब तक 'तरंग' ने "ढोंग", "हंगामा", अण्डरसेक्रेटरी, पैसा-पैसा-पैसा, श्री भोलानाथ, ताज-महल का टेन्डर तथा अपने-अपने दाँव जैसे रोचक सामाजिक नाटकों का सफल प्रदर्शन कर जनता का मन जीत लिया। इनके नाटकों में कार्य करने वाले कलाकारों के नाम हैं - श्रीमती रीता खान तथा श्री अरशद खान (साध्वी जी की पुत्री व जंवाई), श्री शशी जोगलेकर तथा श्रीमती अन्विता जोगलेकर, श्रीमती रेणु भण्डारी, श्री पामे विरधि, श्री हौरेस कोहेलो तथा श्रीमती रीटा कोहेलो, किशोर व्यास, प्रकाश खरे, शांता और लक्ष्मण रागडे, कुसुम और विनोद भारद्वाज और जैस्सिका मिरांडा। मंच-सहायक के रूप में श्री कुरेश बन्टूक, श्री किशोर व्यास, श्रीमती अनिला ओझा, श्री प्रकाश खरे, श्रीमती उल्का खरे, प्रीत आहूजा, शान्ति तथा लक्ष्मण रेगड़े ने कार्य किया। - शेष पृष्ठ 32 पर

इसके अलावा इसके अलावा साध्वी जी ने क्लब600 नामक एक सीनियर क्लब में तीन वर्षों तक अध्यक्षा का पद सम्हाला। ओन्टेरियो से पूर्व साध्वी जी न्यू-ब्रान्ज़विक में कुछेक वर्ष रहीं, जहाँ 1982 में इन्हें वूमेन आफ़ दि येयर का सम्मान मिला। भारतवर्ष में कई वर्ष ये गर्ल्स गाइड से जुड़ी रहीं। एक कलाकार का सही परिचय उसकी कला है। साध्वी जी के नाटकों से जितना मैंने जाना व समझा है मैं सदैव ही उनसे प्रभावित रही हूँ। ऐसा लगता है, मानों उनकी शिराओं में कला व सृजनशीलता रक्त की भाँति प्रवाहित होती रहती है। उन्होंने अपने जीवन से यह सिद्ध कर दिया है कि एक सच्चे कलाकार को आयु, स्वास्थ्य, समय व देश की सीमा से बाँधा नहीं जा सकता। "अपने – अपने दाँव" के प्रदर्शन के समय साध्वी जी अपने अभिनेता-अभिनेत्रियों के उत्साह को बढ़ाने के लिये अस्वस्थ होते हुए भी व्हीलचेयर पर ऑक्सीजन के यंत्र के साथ उपस्थित रहीं। उनके व्यक्तित्व का सबसे प्रभावशाली रूप मुझे लगता है कि सदैव उनके मुख पर सहज मधुर मुस्कान विद्यमान रहती है।

साध्वी जी को देखकर मुझे हिन्दी के वरिष्ठ कवि श्री जयशंकर प्रसाद जी की ये पंक्तियाँ सहज ही स्मरण हो आती हैं -

नारी तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास रजत नग पगतल में।
पीयूष-स्रोत सी बहा करो, जीवन के सुन्दर समतल में?

सत्य ही है, कनाडा की सुन्दर समतल भूमि में साध्वी जी की कला अमृतधारा की भाँति वर्षों से प्रवाहित होती रही है। हम दर्शक उसी रस से सराबोर होकर सदैव आनन्दित होते रहे हैं।

Mistaan Catering & Sweets Inc.

Specializing in Bengali Sweets We do catering for Weddings & Parties

मिष्ठान की मिठाइयाँ

मिष्ठान की मिठाइयाँ
खाओ रसगुल्ले और रस मलाइयाँ

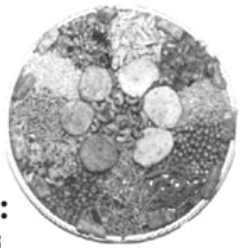

Our Daily Take-out Foods include:

Channa Bhatura	Aloo Ghobi
Malai Kofta	Matter Paneer
Channa Masala	Chicken Masala
Chicken Tikka	Tandoori Chicken
Butter Chicken	Goat Curry

& many more delicious items

अब आप बैठ कर खाने-पीने का आनन्द ले सकते हैं

460 McNicoll Avenue, North York, Ontario M2H 2E1

Visit Our Website: www.mistaan.com

Telephone: (416) 502-2737 Fax: (416) 502-0044

विलोम चित्रकाव्य माला

क्रमांक ४

● चित्रकार: अरविन्द नारले ● कवि: सुरेन्द्र पाठक

गौरसे देखो इस चित्र को, कर लो यह अनुमान
इस दुनियां मे भरे पडे है, भले, बुरे इन्सान
चले भलाई संग बदी ज्यूं, दिन के पीछे रात
युग-युग से है चलती आई, यूंहि चलेगी बात
देता प्रभु जीवन! बन लो, इन्सां या शैतान
कर्म, बोल से स्वयं बना लो, अपनी तुम पहचान

●

बैंक-मैनेजर बैठा देखो, लेखे-जोखे में यूं! व्यस्त
वो ना जाने आन पडेगी, कोई आफत अब कमबख्त
देखो पीछे से कोई आया, अचक अचानक डाकू एक
एक हाथ में ग्रनेड़ थामा, दूजे कर में चाकू एक
श्वेत बडी पगडी से जिसने, ढ़क रखखा है अपना सर
कहीं न जाए वो पहचाना, इसी बात का उसको डर

धमकी दे कर डाकू बोला, चाकू रखकर सीनेपर -
"बे-मौतही मर जाएगा! कहता हूं जो, वोही कर
जल्दी उठकर खोल तिजोरी!गर प्यारी है सबकी जान
शीघ्र पैसा मिला न मुझको, कर दूंगा मैं खडा तुफान!"
भला इसी में लगता अब तो, बैंक-मैनेजर सोचे अब
सबकी जान बचाने हेतू, पैसे इसको दे दूं सब
नोटों से भर, अपना थैला, बच निकला तब डाकू साफ
घर आँ रब का शुक्र मनाया, "अल्ला, मुझको करना माफ
इतना धन है लूटा मैं ने, सुखी रहूंगा सारी उमर
भेष बदलकर, नाम बदलकर, छोड देता हूं यही शहर!"

चित्र उलटकर देखो अब तुम, कुछ बरसों के बाद की बात
डाकू ने की कैसे अपनी, नई जिंदगी की शुरुवात
मसजिद का मुल्ला बन बैठा, किसी शहर में वो जा कर
भेष बदला, नाम भी बदला, औरोंको ना हुई खबर
अभिमान भरा डाकू सोचे, कितना निकला मैं चालाक
अब तक पुलीस ढूंढ न पायी, अब क्या ढूंढेगी वो खाक
+
सादा कपडे, बडी है दाढी, उस डाकू को देखो अब
चोरी के उन पैसों से ही, उसका खर्चा चलता सब
फुरसत में कुछ लिखने बैठा, भूली-बिसरी कोई बात
पीछे से आ किसी चोर ने, छुपकर उसपे किया आघात!
एक सफेद पगडी से जिसने, लिपटा रक्खा अपना सर
छोटी आंखें, नाक पहाडी, तीखी उसकी बडी नजर
सीने पे रख चाकू बोला, "रख दे जो भी तेरे पास
जरा चलाकी की, तो तू ना, ले पाएगा दूजी सांस!"

आई उसको याद पुरानी! स्तब्ध रहा वो कुर्सी पर
किया चोरने द्रव्य इकट्ठा, छान छान के सारा घर!
हाथहि मलता रहा बिचारा, बीते दिन अब आए याद
"अपने कर्मो का ही मैने, फल है पाया बरसों बाद!"
चिंतन...
जो औरों को लूटे आज, लुट जाएगा वो भी कल
समय का चक्कर चलता रहता, कर्मों क है मिलता फल
कहीं भी जाओ, कर्म मनुज के, चलते रहते उसके साथ
देरी से ही क्यों ना हो! पर कर्म दिखाते अपना हाथ!

खोखले रिश्ते

बृजेन्द्र श्रीवास्तव 'उत्कर्ष'(भारत)

काया जरा सी क्या मेरी थकी,
अपने बच्चों को ही हम अखरने लगे,
जिनकी खुशियों पे जीवन निछावर मेरा,
मेरे मरने की घड़ियाँ वो गिनने लगे ।।

मेरे मरने से पहले वो भूले मुझे,
किन्तु, मेरी कमाई पे लड़ने लगे,
जनाजा मेरा उठा ही नही,
जिन्दा घर से ही बाहर, वो करने लगे ।।

नज़रें कमजोर मेरी हुई क्या जरा,
आँख से काजल मेरी वो चुराने लगे,
जतन से जो भी मैने इकट्ठा किया,
आज बाजार में वो लुटाने लगे ।।

जिनको काँधें पर अपने घुमाया वही,
काँधा देने से मुझको मुकरने लगे,
मेरी सारी कमाई हड़पकर के वो,
मेरे कफ़न को ही मुझसे लडने लगे ।।

जिनको अपने लहू से सींचा कभी,
हम उन्ही को बेगाने से लगने लगे,
जिस घरौंदें को हमने बनाया उसी,
के अँधेरे कोने में सडने लगे ।।

जिन्दगी भर महफिल में रहते थे हम,
अब तन्हाई मे तिल-तिल मरने लगे,
कभी गैरों से भी डरते नहीं,
अब अपने ही सायों से डरने लगे ।।

आशीष देते हम जिनको अभी,
उनके मुख से अंगारे निकलने लगे,
कल तलग फूल थे जो मेरे लिये,
वही शूल बन मुझको चुभने लगे।।

जिनके रूदन से रातें कटी जागते,
मेरी खाँसी से सपने उचटने लगे,
रात कटती है मेरी ठिठुरते हुए,
फटी कथरी रजाई में सोने लगे।।

झाड़ू पोछा भी घर में करते हैं हम,
फिर भी खुद गन्दगी में रहने लगे,
मालिकों के मेरे अब बड़े ठाट हैं ,
फटे चिथड़े हम उनके पहनने लगे।।

रास्ता हमने जिनको दिखाया वही,
अपनी मंन्जिल का रोड़ा समझने लगे,
उनकी नजरों में बूढ़ा औ बेकार हूँ ,
पढ़- लिखकर सयाने वो होने लगे ।।

दीप दिवाली के उनके जले है अलग,
आँसुओं में अलग हम तो जलने लगे,
होली में अपनो संग है वो मगन,
उनकी खुशियों में हम खुश होने लगे।।

अपने मुह का निवाला खिलाया जिन्हें ,
दाने-दाने को हमको तरसाने लगे,
घर का डागी भी लंच कर है चुका,
हम उसी की बची को तरसने लगे।।

सबकी जूठन ही मेरे नसीबा में है,
अब तो अधपेट ही हम सोने लगे,
दूध छाती का जिनको पिलाया वही,
नाग बनकर हम को ही डसने लगे।।

मेरे कलेजे के टुकड़े मेरे,
कलेजे में ही घाव करने लगे,
जवानी का जीवन खतम क्या हुआ,
बुढ़ापे में तिल-तिल हम मरने लगे।।

प्राण काया से मेरे निकलते नहीं,
अपने मरने की मन्नत हम करने लगे,
जीवन रौशन हो खुशियाँ से उनका सदा,
हम तो चिरनिद्रा में खोने लगे ।।

■ चित्रकाव्य-कार्यशाला

शहरों की सड़कों पर
बैलगाड़ी चला रहा है,
प्रदूषण को नियन्त्रित करने का
सन्देश ये दे रहा है!

किरन सिंह, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, भारत

●

ये हैं प्रेमचंद के हीरा, मोती
डट कर करते काम और खेती।
आत्मबल की नकेल डाले
तोड़ जंजीर, पहुँचे मालिक के आगे

सुषमा श्रीवास्तव, अमेरिका

●

कल की क्यों बात करें,
आज भी हम कन्धों पर बोझ उठाते हैं,
पर भविष्य के सुनहरे सपनों को आँखों में सजाते हैं,
अब तक आँखों में रोशनी है,
सपनों में रंग भरते रहेंगे,
जब ये दीप बुझ जायेंगे
तब इन रंगों का आभास भी हम खो देंगे,
बात करते हैं समानता की,
यह बोझ भी हमारे ही कन्धों पर पड़ा है,
जब होता है कोई आतंकी हमला,
तब मेरे घर का चूल्हा ठंड है पड़ा,
नेताओं के भाषण है गरमाते,
समाजवादियों के आचरण हैं शरमाते,
जनता-जनार्दन के मन में फांस है चुभती,
मेरे बच्चों के पेट की आग भी न बुझती,
चरमरा जाता है मेरे देश का ढांचा,
पाँच साल बीतने में अभी वक्त है पड़ा,
मेरा तो हर दिन बेचारी में है कटा,
कल की बात क्यों करें,
आज भी बोझ मेरे कन्धों पर है पड़ा

रेखा भाटिया, अमेरिका

●

गुरबत भी इक श्राप है, दाने को मोहताज
ढोते हैं उस बोझ को, जिसमें भरा अनाज
बेजुबान की कौन समझा आजतक खामोशियां
पीठ पर अपने ही ग़म की लादे जो मजबूरियाँ

देवी नागरानी, अमेरिका

●

बोझा ढोते, सोंचे बैल, कैसा तेरा मानव भगवन!
उसकी सेवा करते करते, बीत गया है सारा जीवन
प्रजनन नाड़ी काट हमारी, बना देते हैं हमें नपुंसक
पीट पे डंडे मार मार के, लेते काम क्षमता से अतिरिक्त
हमारी माँ का दूध पी गया, जिस पर था तब हक हमारा
बेजुबान, रस्सी से बंधे थे, भूखे पेट बस! माँ को पुकारा
हल जुतवाएं, बोझ उठवाएं, अंत में भेजे बूचड-खाने
लोभ में अंधे इस मानव को, आओगे भगवन कब समझाने?

सुरेन्द्र पाठक, कनाडा

शंकर जी का वाहन
कृषकों का भगवान
गाड़ी में जुत जाता
दौड़ता जैसे मोटर कार

धरती के आँचल से अन्न उगाकर
भरता मानव का पेट
यह किसान का सच्चा सेवक
तत्पर रहता देने को अपनी भेंट

सुरेखा त्रिपाठी, कनाडा

●

गाडी लाद अनाज़ से मंडी चले बुध्दराम
सुबह सबेरे खेत गए, आते हो गई शाम
सपनें लेते अनाज़ बेच कर पैसे घर लाऊंगा
अब के बरस पप्पू की मां को जोड़ा नया दिलवाऊँगा।

उषा देव, अमेरिका

कैसी यह विडम्बना भगवन्,
बोझा ढोते नहीं करते पल भर विश्राम।
वे नन्दी कहलाते शिव के,
पूजे जाते सुबह और शाम।।
इतना बोझा ये भर देते, दुबली टाँगें खीच न पावें।
अस्थि पञ्जर हुए शरीर को, देख भी इनको दया न आवे।।
डंडे खाते, बढ़ते जाते, हो निढाल, अरज करें भोले भंडारी।
मानव-पशु सब सृष्टि तुम्हारी, फिर क्यों यह दुर्दशा हमारी?

डॉ. जनक खन्ना, कनाडा

■ **पाठकों की प्रतिक्रिया अपेक्षित है!**

■ चित्रकाव्य-कार्यशाला

इस चित्र को देखकर
आपके मन में जो भी भाव आयें
उन्हें अधिक से अधिक छः
पंक्तियों के अन्दर व्यक्त करके भेजें।

नींद चली आती है.....

डॉ. सुधा ओम ढींगरा

बाँट में,
अपने हिस्से का सब छोड़,
कोने में पड़ी
सूत से बुनी वह
मंजी अपने साथ ले आई,
जो पुरानी, फालतू समझ
फैंकने के इरादे से
वहाँ रखी थी।

बेरंग चारपाई को उठाते
बेवकूफ़ लगी थी मैं,
आँगन में पड़ी
बचपन और जवानी का
पालना थी वह।

नेत्रहीन मौसी ने
कितने प्यार से
सूत काता, अटेरा और
चौखटे को बुना था,
टोह- टोह कर रंगदार सूत
नमूनों में डाला था.

चौखटे को कस कर जब
चारपाई बनी,
तो हम बच्चे सब से
पहले उस पर कूदे थे।

उसी चारपाई पर मौसी संग
सट कर सोते थे,
सोने से पहले कहानियाँ सुनते
और तारों भरे आकाश में,
मौसी के इशारे पर
सप्त ऋषि और आकाश गंगा ढूँढते थे।

और फिर अन्दर धंसी
मौसी की बंद आँखों में देखते--
मौसी को दिखता है----
तभी तो तारों की पहचान है।

हमारी मासूमियत पर वह हँस देती
और करवट बदल कर सो जाती,
चन्दन की खुश्बू वाले उसके बदन
पर टाँगें रखते ही ,
हम नींद की आगोश में लुढ़क जाते।

चारपाई के फीके पड़े रंग
समय के धोबी पट्कों से
मौसी के चेहरे पर आईं
झुरियाँ सी लगते हैं।

जीवन की आपाधापी से
भाग जब भी उस
चारपाई पर लेटती हूँ,
तो मौसी का
बदन बन वह
मनुहार और दुलार देती है ।

हाँ चन्दन के साथ अब
बारिश, धूप में पड़े रहने
और त्यागने के दर्द की गंध
भी आती है,
पर उस बदन पर टांगे
फैलाते ही नींद चली आती है.....

****

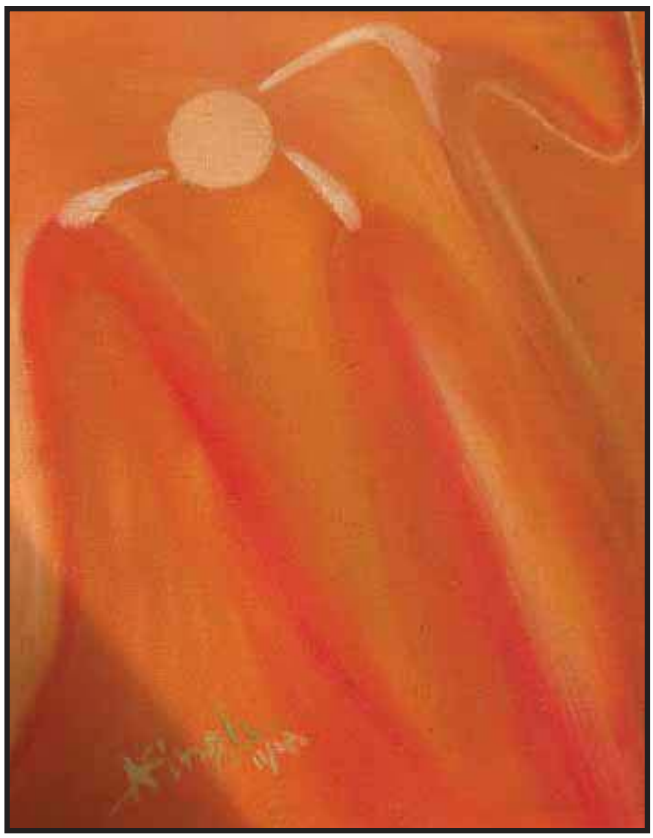

अमित कुमार सिंह

संस्मरण –

एक परंपरा का अन्त था
डॉ. शिवप्रसाद सिंह का जाना

पुण्यतिथि (२८ सितम्बर) के अवसर पर

रूपसिंह चन्देल

डर--- एक ऐसा डर, जो किसी भी बड़े व्यक्तित्व से सम्पर्क करने-मिलने से पूर्व होता है। सच कहूँ तो मैं उनके साहित्य-कार- ---एक उद्भट विद्वान साहित्यकार, जिनकी बौद्धिकता, तार्किकता और विलक्षण प्रतिभा सम्पन्नता ने प्रारम्भ से ही हिन्दी साहित्य को आन्दोलित कर रखा था --- से संपर्क करने से वर्षों तक कतराता रहा। आज हिन्दी साहित्य में लेखकों की संख्या हजारों में है ,लेकिन डॉ. शिवप्रसाद सिंह जैसे विद्वान साहित्यकार आज कितने हैं? आज जब दो-चार कहानियाँ या एक-दो उपन्यास लिख लेने वाले लेखक को आलोचक (?) या सम्पादक महान कथाकार घोषित कर रहे हों तब हिन्दी कथा-साहित्य के शिखर पुरुष शिवप्रसाद सिंह की याद हो आना स्वाभाविक है।

कहते हैं , 'पूत के पांव पालने में ही दिख जाते है।' डॉ. शिवप्रसाद सिंह की प्रतिभा और विद्वत्ता ने इण्टरमीडिएट के छात्र दिनों से ही अपने वरिष्ठों और मित्रों को प्रभावित करना प्रारम्भ कर दिया था। वे कॉलेज की पत्रिका के सम्पादक थे और न केवल विद्यार्थी उनका सम्मान करते थे, प्रत्युत शिक्षकों को भी वे विशेष प्रिय थे। पढ़ने में कुशाग्रता और साहित्य में गहरे पैठने की रुचि के कारण कॉलेज में उनकी धाक थी।

डॉ. शिवप्रसाद सिंह का जन्म 19 अगस्त, 1928 को बनारस के जलालपुर गाँव में एक जमींदार परिवार में हुआ था। वे प्राय: अपने बाबा के जमींदारी वैभव की चर्चा किया करते ; लेकिन उस वातावरण से असंपृक्त बिलकुल पृथक संस्कारों में उनका विकास हुआ। उनके विकास में उनकी दादी माँ, पिता और माँ का विशेष योगदान रहा, इस बात की चर्चा वे प्राय: करते थे। दादी माँ की अक्षुण्ण स्मृति अंत तक उन्हें रही और यह उसी का प्रभाव था कि उनकी पहली कहानी भी 'दादी माँ' थी, जिससे हिन्दी कहानी को नया आयाम मिला. 'दादी माँ' से नई कहानी का प्रवर्तन स्वीकार किया गया--- और यही नहीं, यही वह कहानी थी जिसे पहली आँचलिक कहानी होने का गौरव भी प्राप्त हुआ। तब तक रेणु का आँचलिकता के क्षेत्र में आविर्भाव नहीं हुआ था। बाद में डॉ. शिवप्रसाद सिंह ने अपनी कहानियों में आँचलिकता के जो प्रयोग किए वह प्रेमचंद और रेणु से पृथक --- एक प्रकार से दोनों के मध्य का मार्ग था; और यही कारण था कि उनकी कहानियाँ पाठकों को अधिक आकर्षित कर सकी थीं। इसे विडंबना कहा जा सकता है कि जिसकी रचनाओं को साहित्य की नई धारा के प्रवर्तन का श्रेय मिला हो, उसने किसी भी आंदोलन से अपने को नहीं जोड़ा। वे स्वतंत्र एवं अपने ढंग के लेखन में व्यस्त रहे और शायद इसीलिए वे कालजयी कहानियाँ और उपन्यास लिख सके।

शिवप्रसाद सिंह का विकास हालांकि पारिवारिक वातावरण से अलग सुसंस्कारों की छाया में हुआ, लेकिन उनके व्यक्तित्व में सदैव एक ठकुरैती अक्खड़पन विद्यमान रहा। कुन्तु यह अक्खड़पन प्राय: सुषुप्त ही रहता, जाग्रत तभी होता जहाँ लेखक का स्वाभिमान आहत होता। शायद मुझे उनके इस व्यक्तिव के विषय में मित्र साहित्यकारों ने अधिक ही बताया होगा और मैं उनसे संपर्क करने से बचता रहा. उनकी रचनाओं -- 'दादी मां', 'कर्मनाशा की हार', 'धतूरे का फूल', 'नन्हो', 'एक यात्रा सतह के नीचे', 'राग गूजरी', 'मुरदा सराय' आदि कहानियों तथा 'अलग-अलग वैतरिणी' और 'गली आगे मुड़ती है' से एम.ए. करने तक परिचित हो चुका था और जब लेखन की ओर मैं गंभीरता से प्रवृत्त हुआ, मैंने उनकी कहानियाँ पुन: खोजकर पढ़ीं ; क्योंकि मैं लेखन में अपने को उनके कहीं अधिक निकट पा रहा था। मुझे उनके गाँव-जन-वातावरण ऐसे लगते जैसे वे सब मेरे देखे-भोगे थे।

लंबे समय तक डॉक्टर साहब (मैं उन्हें यही सम्बोधित करता था) की रचनाओं में खोता-डूबता-अंतरंग होता आखिर मैंने एक दिन उनसे संपर्क करने का निर्णय किया। प्रसंग मुझे याद नहीं; लेकिन तब मैं 'रमला बहू' (उपन्यास) लिख रहा था । मैंने उन्हें पत्र लिखा और एक सप्ताह के अंदर ही जब मुझे उनका पत्र मिला, मेरी प्रसन्नता का पारावार नहीं रहा। लिखा था--- 'मैं तुम्हे कब से खोज रहा था!---- आज तक कहाँ थे?'

डॉक्टर साहब का यह लिखना मुझ जैसे साधारण लेखक को अंदर तक अप्लावित कर गया। उसके बाद पत्रों, मिलने और फोन पर लंबी वार्ताओं का जो सिलसिला प्रारंभ हुआ, वह 15-16 जुलाई, 1998 तक चलता रहा। मुझे याद है, अंतिम बार फोन पर उनसे मेरी बात इन्हीं में से किसी दिन हुई थी। उससे कुछ पहले से वे बीमार थे। डाक्टर 'प्रोस्टेट' का इलाज कर रहे थे। यह वृद्धावस्था की बीमारी है। लेकिन उससे उन्हें कोई लाभ नहीं हो रहा था। जून में जब मेरी बात हुई तो दुखी स्वर में वे बोले कि इस बीमारी के कारण 'अनहद गरजे' उपन्यास पर वे कार्य नहीं कर पा रहे (जो कबीर पर आधारित होने वाला था)। उससे पूर्व एक अन्य उपन्यास पूरा करना चाहते थे और उसी पर कार्य कर रहे थे। यह पुनर्जन्म की अवधारणा पर आधारित था। 'मैं कहाँ-कहाँ खोजूं'। फोन पर उसकी संक्षिप्त कथा भी उन्होंने मुझे सुनाई थी। लेकिन 'अनहद गरजे' की तैयारी भी साथ-साथ चल रही थी।

डॉ. शिवप्रसाद सिंह उन बिरले लेखकों में थे, जो किसी विषय विशेष पर कलम उठाने से पूर्व विषय से संबंधित तमाम तैयारी पूरी करके ही लिखना प्रारंभ करते थे। 'नीला चांद', 'कोहरे में युद्ध', 'दिल्ली दूर है' या 'शैलूष' इसके जीवंत उदाहरण हैं। 'वैश्वानर' पर कार्य करने से पूर्व उन्होंने संपूर्ण वैदिक साहित्य खंगाल

डाला था और कार्य के दौरान भी जब किसी नवीन कृति की सूचना मिली, उन्होंने कार्य को वहीं स्थगित कर जब तक उस कृति को उपलब्ध कर उससे गुजरे नहीं, 'वैश्वानर' लिखना स्थगित रखा। किसी भी जिज्ञासु की भांति वे विद्वानों से उस काल पर चर्चा कर उनके मत को जानते थे। दिसंबर में वे इसी उद्देश्य से डॉ. रामविलास शर्मा के यहाँ पहुँचे थे और लगभग डेढ़ घण्टे विविध वैदिक विषयों पर चर्चा करते रहे थे।

जून में जब मैंने उन्हें सलाह दी कि वे दिल्ली आ जाएं, जिससे 'प्रोस्टेट' के ऑपरेशन की व्यवस्था की जा सके, तब वे बोले, "डॉक्टरों ने यहीं ऑपरेशन के लिए कहा है। गरमी कुछ कम हो तो करवा लूंगा।" दरअसल वे यात्रा टालना चाहते थे, जिस-से उपन्यास पूरा कर सकें। डॉक्टरों ने कल्पना भी न की थी कि उन्हें कोई भयानक बीमारी अंदर-ही अंदर खोखला कर रही थी. उनका शरीर भव्य, आँखें बड़ी-- यदि अतीत में जाएं तो कह सकते हैं कि कुणाल पक्षी जैसी सुन्दर, ललाट चौड़ा, चेहरा बड़ा और पान से रंगे होंठ सदैव गुलाबी रहते थे। मैंने उन्हें सदैव धोती पर सिल्क का कुरता पहने ही देखा, जो उनके व्यक्तित्व को द्विगुणित आभा ही नहीं प्रदान करता था, बल्कि दूसरे पर उनकी उद्भट विद्वत्ता की छाप भी छोड़ता था। हर क्षण चेहरे पर विद्यमान तेज और तैरती निश्च्छल मुकराहट ने डॉक्टरों को धोखा दे दिया था और वे आश्वस्त कर बैठे कि मर्ज ला-इलाज नहीं है। साहित्य-कार 'मैं कहाँ-कहाँ खोजूं' को पूरा करने में निमग्न हो गया, जिससे अपने अगले महत्त्वाकांक्षी उपन्यास 'अनहद गरजे' पर काम कर सकें। डॉक्टर साहब कबीर पर डूबकर लिखना चाहते थे; क्योंकि यह एक चुनौतीपूर्ण उपन्यास बननेवाला था (कबीर सदैव सबके लिए चनौती रहे हैं)---- लेकिन शरीर साथ नहीं दे रहा था। जुलाई में एक दिन वे बाथरूम जाते हुए दीवार से टकरा गए. सिर में चोट आई । लेकिन इसके बावजूद वे मुझसे पन्द्रह-बीस मिनट तक बातें करते रहे थे। मैं उनकी कमजोरी भांप रहा था और तब भी मैंने उन्हें कहा था कि वे दिल्ली आ जाएं। "नहीं ठीक हुआ तो आना ही पड़ेगा।" ढंडा-सा स्वर था उनका। सदैव से पृथक थी वह आवाज। अन्यथा फोन पर भी उनकी आवाज के गांभीर्य को अनुभव करना मुझे सुखद लगता था--- "कहो रूप, क्या हाल हैं?" बात का प्रारंभ वे इसी वाक्य से करते थे।

डॉक्टर साहब दिल्ली आए, लेकिन देर हो चुकी थी। आने से पूर्व उन्होंने मुझे फोन करने का प्रयत्न किया रात में, लेकिन फोन नहीं मिला। तब मोबाइल का चलन न था। उन्होंने डॉ. कृष्णदत्त पालीवाल को फोन कर आने की बात बताई। पालीवाल जी ने उन्हें एयरपोर्ट से रिसीव किया। कई दिन डॉक्टरों से संपर्क में बीते, अंतत:10 अगस्त को उन्हें राममनोहर लोहिया अस्पताल के प्राइवेट नर्सिंग होम में भर्ती करवाया गया। मैं जब मिलने गया तो देखकर हत्प्रभ रह गया ----" क्या ये वही डॉ. शिवप्रसाद सिंह हैं?' डॉक्टर साहब का शरीर गल चुका था। शरीर का भारीपन ढूंढ़े से भी नहीं मिला. कंचन-काया घुल गई थी और बांहों में झुर्रियां स्पष्ट थीं। मेरे समक्ष एक ऐसा युगपुरुष शैय्यासीन था, जिसने साहित्य में मील के पत्थर गाड़े थे। जिधर रुख किया, शोध, आलोचना, निबंध, कहानी, उपन्यास, यात्रा- संस्मरण या नाटक---- उल्लेखनीय काम किया। मैं यह बात पहले भी कह चुका हूँ और निस्संकोच पुन: कहना चाहता हूँ कि हिन्दी उपन्यासों के क्षेत्र की उदासीनता उनके 'नीला चाँद' से टूटी थी। इसे इस रूप में कहना अधिक उचित होगा कि 'नीला चाँद' से ही उपन्यासों की वापसी स्वीकार की जानी चाहिए। नई पीढ़ी, जो कहानियों और अन्य लघु विधाओं में मुब्तिला थी, उसके पश्चात उपन्यासों की ओर आकर्षित हुई। बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक को यदि 'उपन्यास दशक' के रूप में रेखांकित किया जाए तो अत्युक्ति न होगी। अनेक महत्त्वपूर्ण उपन्यास इस दशक में आए। यह अलग बात है कि साहित्य की निकृष्ट राजनीति और तत्काल-झपट की बढ़ती प्रवृत्ति के कारण जिन उपन्यासों की चर्चा होनी चाहिए थी, नहीं हुई या अपेक्षाकृत कम हुई; और जिनकी हुई, वे उस योग्य न थे। डॉ शिवप्रसाद सिंह के उपन्यासों - 'शैलूष', 'हनोज दिल्ली दूर अस्त' जो दो खंडों -- 'कोहरे में युद्ध' एवं 'दिल्ली दूर है' के रूप में प्रकाशित हुए थे, एवं 'औरत' और उनके अंतिम उपन्यास 'वैश्वानर' की अपेक्षित चर्चा नहीं की गई। ऐसा योजनाबद्ध रूप से किया गया। डॉ. शिव प्रसाद सिंह इस बात से दुखी थे। वे दुखी इस बात से नहीं थे कि उनकी कृतियों पर लोग मौन धारण का लेते थे, बल्कि इसलिए कि हिन्दी में जो राजनीति थी उससे वह साहित्य का विकास अवरुद्ध देखते थे। उनसे मुलाकात होने या फोन करने पर वह साहित्यिक राजनीति की चर्चा अवश्य करते थे।

इस अवसर पर उनके विषय में व्यक्त राजकुमार गौतम के उद्गार याद आ रहे हैं। गौतम ने ऐसा किसी राजनीतिवश किया था या अपनी किसी कुण्ठावश आजतक मैं समझ नहीं पाया। गौतम मेरे विभाग में थे और कई वर्षों तक हम साथ-साथ रहे थे। जिन दिनों की बात है, उन दिनों हम आर.के. पुरम कार्यालय में थे। बात 1993 की थी । 'नवल कैण्टीन' में चाय के दौरान शिवप्रसाद सिंह की चर्चा आने पर राजकुमार गौतम ने तिक्ततापूर्वक कहा, "वह बुड्ढा स्साला क्या लिखता है--- इतिहास की चोरी ही तो करता है।" उन्होंने दो अवसरों पर यही बात कही। बात मुझे आहत कर गयी । शायद कही भी इसीलिए गयी थी, क्योंकि मैं शिवप्रसाद जी के अति निकट था । तीसरी बार उन्होंने यह बात तब कही जब वह रक्षा मंत्रालय में प्रतिनियुक्ति में थे और मैं आर. एण्ड डी. में था। हम प्राय: लंच के समय मिलते और साहित्य पर चर्चा करते। एक दिन लंच के बाद जब हम अपने-अपने कार्यालयों को जा रहे थे तब 'नार्थब्लॉक" के गेट पर उन्होंने शिव-प्रसाद सिंह के बारे में हू बहू वही शब्द कहे जो आर.के.पुरम की नवल कैण्टीन में दो बार वह कह चुके थे। मैंने तीनों बार ही कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की, लेकिन इस विषय पर निरन्तर सोचता रहा। दो निष्कर्ष निकाले थे तब मैंने। 'नीला चाँद' प्रकाशित होने के बाद शिवप्रसाद सिंह के कुछ समकालीन साहित्यकार उनके विरुद्ध बोलने लगे थे -- यहाँ तक कि वे उन्हें हिन्दूवादी लेखक भी कहने लगे थे। उनमें एक बार कथा पत्रिका के सम्पादक भी थे। निर्मल वर्मा और शैलेश मटियानी भी उनकी राजनीति का शिकार हो रहे थे। गौतम जी उन दिनों उन सम्पादक जी के निकट थे और संभव है उनके प्रभाववश उन्होंने शिवप्रसाद जी को गाली

दी हो।
दूसरा कारण भी हो सकता है। 1992 से गौतम जी दिल्ली के एक प्रकाशक के लिए कुछ काम कर रहे थे। उन प्रकाशक ने 1993 में अपने पिता के नाम दिये जाने वाले पुरस्कार समारोह की अध्यक्षता के लिए शिवप्रसाद जी को बुलाया था। प्रकाशक के यहाँ गौतम जी की साढियता देख शिवप्रसाद सिंह ने मुझसे पूछा कि गौतम प्रकाशक के यहाँ किस पद पर काम कर रहे हैं। मैंने उन्हें बताया कि वह मेरे विभाग में मेरे ही साथ हैं। बात इतनी ही थी, लेकिन शिवप्रसाद जी की चर्चा चलने पर मैंने उनकी उस बात का ज़िक्र गौतम से कर दिया था। संभव है साहित्य में कुछ बड़ा न कर पाने की कुण्ठा ने गौतम को शिवप्रसाद जी को गाली देने के लिए प्रेरित किया हो। इस बात का ज़िक्र मैंने वरिष्ठ कथा-कार हिमांशु जोशी से किया; और शिकायत के रूप में किया, क्योंकि वे हम दोनों के मित्र थे और आज भी हैं और वह शिवप्रसाद जी के भी निकट थे। उन्होंने जो उत्तर दिया वह चौंकानेवाला था। उनका कथन था कि गौतम ऐसा कह ही नहीं सकता। खैर, आज उतनी ही पीड़ा से, जितनी तब मुझे हुई थी, जब गौतम ने शिवप्रसाद सिंह को गलियाया था, मैं इस घटना की चर्चा केवल इसलिए कर रहा हूँ कि आज भी साहित्य में कुछ न कर पाने वाले लोग निरंतर काम करने वाले रचनाकारों को गलियाते रहते हैं। यहाँ मुझे शिवप्रसाद जी के शब्द याद आ रहे हैं जो उन्होंने मुझसे लंबे साक्षात्कार के दौरान ऐसे लोगों के लिए कहे थे- "वे मुझसे अच्छा राग गाकर दिखा दें मैं गाना (लिखना) बँद कर दूँगा ।"
डॉक्टर साहब के अनेक पत्र हैं मेरे पास, जिसमें उन्होंने मुझे सदैव यही सलाह दी कि लेखन में न कोई समझौता करूं, न किसी की परवाह। और उन्होंने भी किसी की परवाह नहीं की। जीवन में कभी व्यवस्थित नहीं रहे। रहे होते तो वे दूसरे बनारसी विद्वानों की भांति बनारस में ही न पड़े रहे होते। कहीं भी कोई ऊंचा पद ले सकते थे। ऐसा भी नहीं कि उन्हें ऑफर नहीं मिले, लेकिन वे कभी 'कैरियरिस्ट' नहीं रहे। जीवन की आकांक्षाएं सीमित रहीं। बहुत कुछ करना चाहते थे। 'वैश्वानर' लिख रहे थे, उन दिनों एक बार कहा था -- "यदि जीवन को दस वर्ष और मिले तो सात-आठ उपन्यास और लिखूंगा । "
1949 में उदय प्रताप कॉलेज से इंटरमीडिएट कर शिवप्रसाद जी ने 1951 में बी.एच. यू. से बी.ए. और 1953 में हिन्दी में प्रथम श्रेणी में प्रथम एम.ए. किया था। स्वर्ण पदक विजेता डॉ. शिव-प्रसाद सिंह ने एम.ए. में 'कीर्तिलता और अवहट्ठ भाषा' पर जो लघु शोध प्रबंध प्रस्तुत किया उसकी प्रशंसा राहुल सांकृत्यायन और डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने की थी। हालांकि वे द्विवेदी जी के प्रारंभ से ही प्रिय शिष्यों में थे, किन्तु उसके पश्चात द्विवेदी जी का विशेष प्यार उन्हें मिलने लगा। द्विवेदी जी के निर्देशन में उन्होंने 'सूर पूर्व ब्रजभाषा और उसका साहित्य' विषय पर शोध संपन्न किया, जो अपने प्रकार का उत्कृष्ट और मौलिक कार्य था। डॉ. सिंह काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में 1953 में प्रवक्ता नियुक्त हुए, जहां से 31 अगस्त 1988 में प्रोफेसर पद से उन्होंने अवकाश ग्रहण किया था। भारत सरकार की नई शिक्षा नीति के अंतर्गत यू.जी.सी. ने 1986 में उन्हें 'हिन्दी पाठ्यक्रम विकास केन्द्र' का समन्वयक नियुक्त किया था। इस योजना के अंतर्गत उनके द्वारा प्रस्तुत हिन्दी पाठपाम को यू.जी.सी. ने 1989 में स्वीकृति प्रदान की थी और उसे देश के समस्त विश्वविद्यालयों के लिए जारी किया था। वे 'रेलवे बोर्ड के राजभाषा विभाग' के मानद सदस्य भी रहे और साहित्य अकादमी, बिरला फाउंडेशन, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान जैसी अनेक संस्थाओं से किसी-न-किसी रूप में संबद्ध रहे थे।

डॉक्टर साहब प्रारंभ में अरविंद के अस्तित्ववाद से प्रभावित रहे थे और यह प्रभाव कमोबेश उन पर अंत तक रहा भी; लेकिन बाद में वे लोहिया के समाजवाद के प्रति उन्मुख हो गए थे और आजीवन उसी विचारधारा से जुड़े रहे। एक वास्तविकता यह भी है कि वे किसी भी प्रगतिशील से कम प्रगतिशील नहीं थे; लेकिन प्रगतिशीलता या मार्क्सवाद को कंधे पर ढोनेवालों या उसीका खाने-जीनेवालों से उनकी कभी नहीं पटी। इसका प्रमुख कारण उन लोगों के वक्तव्यों और कर्म में पाया जानेवाला विरोधा-भास डॉ. शिवप्रसाद सिंह को कभी नहीं रुचा। वे अंदर-बाहर ए क थे। जैसा लिखा वैसा ही जिया भी। इसीलिए तथाकथित मार्क्सवादियों या समाजवादियों की छद्मता से वे दूर रहे और इ सके परिणाम भी उन्हें झेलने पड़े। 1969 से साहित्य अकादमी में हावी एक वर्ग ने यह दृढ़ निश्चय कर लिया था कि उन्हें वह पुरस्कृ त नहीं होने देगा--- और लगभग बीस वर्षों तक वे अपने उस कृ त्य में सफल भी रहे थे. लेकिन क्या सागर के ज्वार को अवरुद्ध किया जा सकता है? शिवप्रसाद सिंह एक एसे सर्जक थे, जिनका लोहा अंतत: उनके विरोधियों को भी मानना पड़ा।

डॉक्टर साहब ने जीवन में बहुत उतार-चढ़ाव देखे, लेकिन उनके जीवन का बेहद दु:खद प्रसंग था उनकी पुत्री मंजुश्री की मृत्यु। उससे पहले वे दो पुत्रों को खो चुके थे; लेकिन उससे वे इतना न टूटे थे जितना मंजुश्री की मृत्यु ने उन्हें तोड़ा था। वे उसे सर्वस्व लुटाकर बचाना चाहते थे। बेटी की दोनों किडनी खराब हो चुकी थीं। वे उसे लिए दिल्ली से दक्षिण भारत तक भटके थे। अपनी किडनी देकर उसे बचाना चाहते थे, लेकिन नहीं बचा सके थे। उससे पहले चार वर्षों से वे स्वयं साइटिका के शिकार रहे थे, जिससे लिखना कठिन बन रहा था। मंजुश्री की मृत्यु ने उन्हें तोड़ दिया था। आहत लेखक लगभग विक्षिप्त-सा हो गया था। उनकी स्थिति से चिंतित थे डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी--- और द्विवेदी जी ने अज्ञेय जी को कहा था कि वे उन्हें बुलाकर कुछ दिनों के लिए कहीं बाहर ले जाएँ। स्थान परिवर्तन से शिवप्रसाद सिंह शायद ठीक हो जाएंगे। डॉक्टर साहब ने यह सब बताया था इन पंक्तियों के लेखक को। मंजु की मृत्यु के पश्चात वे मौन रहने लगे थे---- कोई मिलने जाता तो उसे केवल घूरते रहते। साहित्य में चर्चा शुरू हो गई थी कि अब वे लिख न सकेंगे ---बस अब खत्म।

लेकिन डॉक्टर साहब का वह मौन धीरे-धीरे ऊर्जा प्राप्त करने के लिए था शायद। उन्होंने अपने को उस स्थिति से उबारा था। समय अवश्य लगा था, लेकिन वे सफल रहे थे और वे डूब गए थे मध्यकाल में। यद्यपि वे अपने साहित्यिक गुरु डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी से प्रभावित थे, लेकिन डॉ. नामवर सिंह के इस विचार से सहमत नहीं हुआ जा सकता कि 'डॉ. शिवप्रसाद सिंह को

एतिहासिक उपन्यास लेखन की प्रेरणा द्विवेदी जी के 'चारुचंन्द्र लेख' से मिली थी 'द्विवेदी जी का 'चारुचंद्र लेख' भी ग्यारहवीं-बारहवीं शताब्दी के राजा गहाड़वाल से संबधित है।' (राष्ट्रीय सहारा, 18 अक्टूबर, 1998) । नामवर जी के इस कथन को क्या परोक्ष टिप्पणी माना जाए कि चूंकि द्विवेदी जी ने गहाड़वालों को आधार बनाया इसलिए शिवप्रसाद जी ने चंदेल नरेश कीर्तिवर्मा की कीर्ति पताका फरहाते हुए 'नीला चाँद' और त्रलोक्य वर्मा पर आधारित 'कोहरे में युद्ध' एवं 'दिल्ली दूर है' लिखा । 'नीला चाँद' जिन दिनों वे लिख रहे थे, साहित्यिक जगत में एक प्रवाद प्रचलित हुआ था कि डॉ. शिवप्रसाद सिंह अपने खानदान (चन्देलों पर) पर उपन्यास लिख रहे हैं। मेरे एक प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा था---"मैं नहीं समझता कि मैंने ऐसा लिखा है। मैंने तो जहाँ तक पता है, उनके वंश पर लिखा है..... मेरी मां गहाड़वाल कुल से थीं और वे भी गहाड़वाल हैं (शायद यह बात उन्होंने नामवर जी के संदर्भ में कही थी) क्या मैं अपने मातृकुल का अनर्थ सोचकर उपन्यास लिख रहा था? जो सत्य है, वह सत्य है। उसमें क्या है और क्या नहीं है, यही सब यदि मैं देखता तो चंदबरदाई बनता।" (मेरे साक्षात्कार)

डॉक्टर साहब ऊपर से कठोर लेकिन अंदर से मोम थे। जितनी जल्दी नाराज होते, उससे भी जल्दी वे पिघल जाते थे। वे बेहद निश्छल , सरल और किसी हद तक भोले थे। उनकी इस निश्च्छलता का लोग अनुचित लाभ भी उठाते रहे। सरलता और भोलेपन के कारण कई बार वे कुटिल पुरुषों की पहचान नहीं कर पाते थे। कई ऐसे व्यक्ति, जो पीठ पीछे उनके प्रति अत्यंत कटु वचन बोलते , किन्तु सामने उनके बिछे रहे थे और डॉक्टर साहब उनके सामनेवाले स्वरूप पर लट्टू हो जाते थे। हिन्दी साहित्य का बड़ा भाग बेहद क्षुद्र लेखकों से भरा हुआ है (एक उदाहरण ऊपर दे ही चुका हूं), जो घोर अवसरवादी और अपने हित में किसी भी हद तक गिर जाने वाले हैं। यह कथन अत्यधिक कटु, किन्तु सत्य है। डॉक्टर साहब इस सबसे सदैव दु:खी रहे। वे साहित्य में ही नहीं, जीवन में भी शोषित, उपेक्षित और दलित के साथ रहे ---'शैलूष' हो या 'औरत' या उनकी कहानियाँ। इतिहास में उनके प्रवेश से आतंकित उनका विरोध करनेवाले साहित्यकारों-आलोचकों ने क्या उनके 'नीला चाँद' के बाद के उपन्यास पढ़े हैं? क्या इतिहास से कटकर कोई समाज जी सकता है? जब ऐतिहासिक लेखन के लिए हजारीप्रसाद द्विवेदी के प्रशंसक डॉ. शिवप्रसाद सिंह की आलोचना करते हैं तब उसके पीछे षडयंत्र से अधिक डॉ. शिवप्रसाद सिंह की लेखन के प्रति आस्था, निरंतरता और साधना से उनके आतंकित होने की ही गंध अधिक आती है। वास्तव में उनका मध्ययुगीन लेखन वर्तमान परिप्रेक्ष्य की ही एक प्रकार की व्याख्या है। इस विषय पर बहुत कुछ कहने की गुंजाइश है, लेकिन इस बात से अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि उनकी कृतियों का मूल्यांकन अब होगा-- हिन्दी जगत को करना ही होगा। उनकी साधना की सार्थकता स्वत: सिद्ध है। 'नीला चाँद' जैसे महाकाव्यात्मक उपन्यास युगों में लिखे जाते हैं ---- और यदि उसकी तुलना टॉल्स्तोय के 'युद्ध और शांति' से की जाए तो अत्युक्ति न होगी।

साहित्य के महाबली डॉ. शिवप्रसाद सिंह को अस्पताल की शैय्या पर पड़ा देख मैं कांप गया था। वर्षों से मैं उनसे जुड़ा रहा था। वे जब-जब दिल्ली आए, शायद ही कोई अवसर रहा होगा जब मुझसे न मिले हों। बिना मिले उन्हें चैन नहीं था। मेरे प्रति उनका स्नेह यहाँ तक था कि दिल्ली के कई प्रकाशकों को कह देते ---"जो कुछ लेना है, रूप से लो।" अर्थात उनकी कोई भी पांडुलिपि। कई ऐसे अवसर रहे कि मैं सात-आठ -- दस घंटे तक उनके साथ रहा। और उस दिन वे इतना अशक्त थे कि मातृ क्षीण मुस्कान ला इतना ही पूछा "कहो, रूप?"

डॉ. शिव प्रसाद सिंह

डॉक्टर साहब अस्पताल से ऊब गए थे। उन्हें अपनी मृत्यु का आभास भी हो गया था शायद। वे अपने बेटे नरेंद्र से काशी ले जाने की जिद करते, जिसके सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन को वे अपने तीन उपन्यासों -- 'नीला चांद', 'गली आगे मुड़ती है' और 'वैश्वानर' में जी चुके थे; जिसे विद्वानों ने इतालवी लेखक लारेंस दरेल के 'एलेक्जेंड्रीया क्वाट्रेट' की तर्ज पर ट्रिलाजी कहा था। वे कहते ---"जो होना है वहीं हो।" और वे 7 सितंबर को 'सहारा' की नौ बजकर बीस मिनट की फ्लाइट से बनारस उड़ गए थे---- एक ऐसी उड़ान के लिए, जो अंतिम होती है। 6 सितंबर को देर रात तक मैं उनके साथ था। बाद में 7 सितंबर को नरेंद्र से फोन पर उनके हाल जाने थे। नरेन्द्र जानते थे कि वे अधिक दिनों साथ नहीं रहेंगे। उन्हें फेफड़ों का कैंसर था; लेकिन इतनी जल्दी साथ छोड़ देंगे, यह हमारी कल्पना से बाहर था। 28 सितंबर को सुबह चार बजे साहित्य के उस साधक ने आँखें मूँद लीं सदैव के लिए और उसके साथ ही हजारीप्रसाद द्विवेदी, अमृतलाल नागर, यशपाल एवं भगवतीचरण वर्मा की परंपरा का अंतिम स्तंभ ढह गया था। निस्संदेह हिन्दी साहित्य के लिए यह अपूरणीय क्षति थी ।

अनिल प्रकाशन
प्रकाशक एवं पुस्तक-विक्रेता
2619-20, न्यू मार्किट, नई सड़क, दिल्ली-110006

दूरभाष : 23286781
20076776
मोबाईल : 9312177135

ANIL PRAKASHAN, NAI SARAK, DELHI-110006

प्रेस विज्ञप्ति / प्रकाशनार्थ

संपादक ''हिन्दी चेतना''

स्वतंत्रता सेनानी सचित्र कोश का लोकार्पण

अमर शहीद मदनलाल ढींगरा के बलिदान-शताब्दी वर्ष पर श्री रविचन्द्र गुप्ता द्वारा लिखित 'स्वतंत्रता सेनानी सचित्र कोश' का लोकार्पण सुप्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. कमलकिशोर गोयनका ने किया। अनिल प्रकाशन, दिल्ली द्वारा प्रकाशित इस ग्रंथ के लोकार्पण के अवसर पर ओजस्वी कवि डॉ. सारस्वत मोहन मनीषी तथा संस्कृतज्ञ डॉ. कैलाशचन्द ने इस ग्रंथ का परिचय दिया। वक्ताओं ने कहा कि 384 पृष्ठों के बहुरंगीय आर्ट पेपर में प्रकाशित इस कोश का मूल्य मात्र 285/- रुपये अपने आप में एक सराहनीय प्रयास है। डॉ. कमलकिशोर गोयनका ने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि श्री रविचन्द्र गुप्ता ने स्वतंत्रता सेनानियों के संबंध में यह पुस्तक लिखकर एक राष्ट्रीय महत्व का कार्य किया है। ये देश की आगामी पीढ़ियों के लिए प्रेरणा स्रोत बनेगी। डॉ. गोयनका ने यह भी कहा कि ये पुस्तक देश के बच्चों तक अवश्य पहुँचनी चाहिए और इसका देश की सभी भाषाओं में अनुवाद भी होना चाहिए।

'शहीद-स्मृति चेतना समिति' की ओर से डॉ. कमलकिशोर गोयनका ने इस पुस्तक के प्रकाशक श्री अनिल कुमार गुप्ता को शाल भेंट कर सम्मानित किया। इस कोश की भूमिका प्रख्यात साहित्यकार एवं पत्रकार श्री शिवकुमार गोयल ने लिखी है।

भवदीय
अनिल कुमार
(अनिल कुमार गुप्ता)

लक्ष्मी-नारायण गोल्डन ग्रुप का रंगा-रंग ११ वां वार्षिक उत्सव

दिनांक 20 जून को लक्ष्मी-नारायण मंदिर के पवित्र सभागार में लक्ष्मी-नारायण गोल्डन ग्रुप द्वारा 11 वें वार्षिक दिवस के उपलक्ष में एक सुंदर कार्यक्रम का आयोजन किया गया । कार्यक्रम का प्रारम्भ भारत एवं कैनेडा के सामूहिक राष्ट्रीय गीत-गायन के साथ हुआ । कार्यक्रम में कविता पाठ, गीत-गायन एवं नृत्यों का उचित सम्मिलन था । सभी उपस्थित दर्षकों ने मनोरंजित गतिविधियों का भरपूर लाभ उठाया ।
मातृ दिवस (10मई) एवं पितृ दिवस (21 जून) निकट होने के कारण मां-बाप का आदर सहित स्मरण कराने वाली कवितायें भी सुनायी गयीं ।
सम्मानित व्यक्तियों में मुख्य अतिथि श्री श्याम त्रिपाठी जी ने कार्यक्रम के अध्यक्ष का पद ग्रहण किया और ओंटेरियो विधान सभा के सदस्य श्री बैस बालकिसून जी विशेष रुप से आमंत्रित अतिथि के रुप में उपस्थित हुये । अपने वक्तव्य में श्री बैस बालकिसून जी ने बताया कि लक्ष्मी-नारायण गोल्डन ग्रुप से उनका बहुत पुराना सम्बंध है और जब भी उन्हे निमंत्रण दिया जाता है वह अवश्य ही उपस्थित होकर सब का साथ देते हैं। श्री बैस बालकिसून जी कार्यक्रम के अंत तक ठहरे और सभी के साथ आनंद पूर्वक भोजन भी ग्रहण किया। भूतपूर्व अध्यक्षा श्रीमती अमर मिश्रा ने बड़े सुन्दर शब्दों सहित नयी अध्यक्षा श्रीमती राज कश्यप और कार्यक्रम में आमंत्रित अतिथियों का स्वागत किया । श्री बैस बालकिसून जी ने लक्ष्मी-नारायण गोल्डन ग्रुप के बोर्ड के डायरेक्टरों को प्रशंसा पत्र प्रदान किये ।
मुख्य अतिथि श्री श्याम त्रिपाठी जी ने ग्रुप की परम्परानुसार जून माह में जन्मे युवक एवं युवतियों को उनकी दीर्घ आयु की कामनायें करते हुये 'जन्म-दिवस कार्ड' समर्पित किये। श्री वेद प्रकाश लहार (मुख्य सचिव) ने लगातार दो बार अध्यक्ष चुनी गयीं श्रीमती अमर मिश्रा को ग्रुप की पूरे चार वषों की सेवा करने के उपलक्ष्य में एक सुंदर ट्राफी और प्रशंसा-पत्र भेंट किया। भूतपूर्व जन सम्पर्क अधिकारी श्रीमती अमिता श्रीवास्तव की चार वर्षों की सेवाओं के लिये श्रीमती अमर मिश्रा द्वारा एक प्रशंसा-पत्र प्रदान किया गया । कार्यक्रम का संचालन नयी अध्यक्षा श्रीमती राज कश्यप एवं श्रीमती अमिता श्रीवास्तव ने मिलकर बड़ी योग्यता से परिपूर्ण किया ।
कविता पाठ में भाग लेने वाले कवियों के नाम इस प्रकार हैं: श्री देवेंद्र मिश्रा, श्री श्याम त्रिपाठी, श्री जगदीश चंद्र शारदा, श्रीमती अमर मिश्रा, श्रीमती राज कश्यप, डॉ. भारतेंदु श्रीवास्तव, श्री राज महेश्वरी, श्रीमती प्रमिला भार्गव,श्रीमती कमलेश ओबरोय, और श्रीमती चंदा।
किया गया । विशेष धन्यवाद के पात्र थे, हिंदी और अंग्रेज़ी में
बैनर तैयार करने के लिये श्री अरविंद नराले, स्टेज तैयार करने और साज-सज्जा के लिये श्री गोविंद सिंह मेहता, श्रीमती अमरजीत सैनी, श्री हरिकिशन चोपरा, श्रीमती सुनीता सिंह, श्रीमती पुष्पावती लहार, पुरुस्कार-प्रबंध के लिये ग्रुप के सचिव श्री हरी कृष्ण, भोजन प्रबंध के लिये श्रीमती कोकिला ब्रह्मभट्ट, श्रीमती कुंजबाला, पं.नंद लाल, श्री रवींद्र और स्वयंसेवक महिलायें, साउंड सिस्टम के लिये श्री पंकज एवं श्रीमती चांद, मूवी बनाने का पूरा काम करने के लिये श्री सुशील सदन। दानियों के लिये विशेष धन्यवाद: श्रीमती अमर मिश्रा, श्री सुरेंद्र देसाई, श्री राम लाल भाटिया एवं श्री गोविंद सिंह अति आभार प्रदर्शन हर प्रकार की सहायता एवं सहयोग के लिये लक्ष्मी-नारायण मंदिर के प्रधान श्री बृजमोहन त्रिखा और मंदिर कमेटी के सभी सदस्य ।

अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में श्री श्याम त्रिपाठी जी ने लक्ष्मी-नारायण गोल्डन ग्रुप के प्रयत्नों एवं उपलब्धियों की सराहना करते हुये अपनी हार्दिक शुभकामनायें प्रकट की । इस प्रकार कार्यक्रम का समापन बड़े सौहार्दता के वातावरण में सम्पन्न हुआ । अंत में स्वादिष्ट प्रीति भोज का आनंद उठाने के पश्चात सभी ने विदा ली ।

John A. Fleming
Financial Advisor
Edward Jones
MAKING SENSE OF INVESTING
1100 Davis Drive, Unit #8
Newmarket, ON L3Y 8W8
Office: 905-830-3690
Fax: 905-830-6987
john.fleming@edwardjones.com
www.edwardjones.com
Life Insurance Agent for Edward Jones Insurance Agency.

पुष्पा भार्गव यू. के.

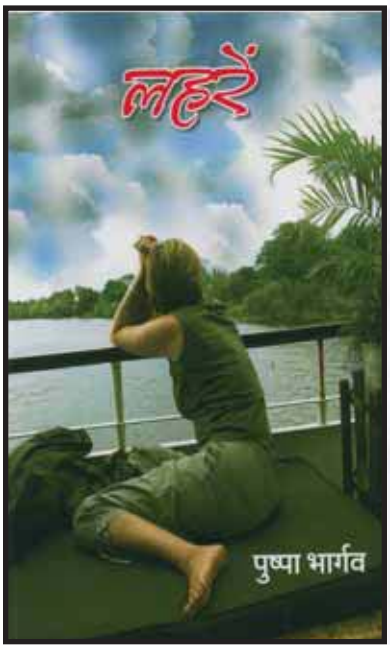

रविवार 31 मइ २००९ को काव्य धारा लन्दन के विशेश कार्यक्रम में पुष्पा भार्गव के काव्य सग्रह ' लहरें ' का विमोचन भारतीय उच्चायोग की संस्कृति मंत्री तथा नेहरू केन्द्र की निर्देशिका श्री मती मोनिका कपिला मोहता के कर-कमलों द्वारा बोम्बे पैलेस, लन्दन में हुआ / इस आयोजन का संचालन काव्य धारा के मुख्य सचिव श्री प्रेम मोड्गिल ने किया / इस अवसर पर लन्दन के जानेमाने साहित्यकार , लेखक, कवि और विभिन्न सस्थाओं के अध्यक्ष तथा कव्य धारा के सभी सदस्य व पदधिकारी उपस्थित थे /

आयोजन की व्यवस्था बहुत ही सुन्दर और सुरुचिपूर्ण रूप से की गई थी / स्वागत और परिचय के पश्चात कार्यक्रम का आरम्भ सरस्वती वन्दना के साथ दीप जला कर किया गया /संसकृति मंत्री श्री मती मोनिका कपिला मोहिता और लन्दन के विख्यात लेखक और कवि डा० सत्येन्द्र श्रीवास्तव ने दीप प्रज्जलित किया /तत्पश्चात काव्य धारा की सदस्या कवयित्री उर्मिला भारद्वाज ने कविता पाठ करके पुष्पा भार्गव का अभिनन्दन किया /

कार्यक्रम के बीच डा० सत्येद्र श्रीवास्तव ने काव्य संग्रह 'लहरें ' के ऊपर अपना बहुत ही प्रभावशाली वक्तव्य दिया / इसके उपरान्त हिन्दी समिति की उपाध्यक्षा और लन्दन की जानीमानी लेखिका व कवयित्री श्री उषा राजे सक्सेना ने पुष्पा भार्गव के सामाजिक व साहित्यिक कार्यों की प्रशंसा करते हुए उनके काव्य संग्रह की भरसक सराहना की/ इस आयोजन में पुष्पा भार्गव के गीतों पर आधारित नृत्यों का प्रदर्शन शमा डांस कम्पनी द्वारा किया गया जिसने दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर दिया / काव्य सग्रह के विमोचन के पश्चात श्री मती मोहता ने पुष्पा भार्गव के अतियन्त सुन्दर काव्य संग्रह 'लहरें ' की प्रशंसा करके उनको उनकी सफ़लता के लिए अनेकानेक बधाइयाँ दीं /

इस आयोजन में भारतीय उच्चायोग के उच्च अधिकारी और प्रसिद्ध कवि श्री मथुप मोहता भी उपस्थित थे /इसके अतिरिक्त लन्दन के जानेमाने कवि सोहन राही, भारतेन्दु विमल, तोषी अमृता व हिन्दी अधिकारी श्री आनंद कुमार, 'लहरें ' के चित्रक श्री बजरंग माथुर एम० बी० ई० , शमा डाँस कम्पनी की आरटिस्टिक डायरेक्टर श्री मती सुषमा मेहता , भारतीय संस्थाओं के अद्ध्यक्ष ,नृत्यकला की आर्टिस्टिक डायरेक्टर बीथिका राहा , हिन्दू वेलफ़ेयर एसोसिएशन एसेक्स के चेयरमेन श्री बलदेव गोयल एम० बी० ई० इत्यादि उपस्थित थे / अन्त में स्वादिष्ट प्रीतिभोजन के बाद आयोजन समाप्त हुआ /

'चाँद है शबाब पर .....
शरद पूर्णिमा पर एक काव्य संध्या

मंजु महिमा, (अहमदाबाद)

साहित्यिक एवं सामाजिक संस्था 'संजीवनी' द्वारा शरद पूर्णिमा के अवसर पर शुकन रेज़ीडेंसी, न्यू सी.जी.रोड, अहमदाबाद के परिसर में एक काव्य-संध्या का आयोजन किया गया, जिसमें अहमदाबाद की सात सुपरिचित कवयित्रियों और 2 कवियों ने अपनी रचनाओं से सबको रस विभोर कर दिया। इनसे प्रोत्साहित होकर इस सोसाइटी के करीब 13 बालकों और 4 कवि हृदयों ने भी अपनी रचनाएं सुनाई। कायर्क्रम का शुभारम्भ पारम्परिक तरीके से दीप-प्रज्ज्वलन और माँ सरस्वती की स्तुति से हुआ। बेबी श्रुतकीर्ति के मधुर कंठ से निस्रत स्वर सबको आल्हादित कर गया। काव्य संध्या की अध्यक्षता का दायित्व वरिष्ट कवयित्री डॉ. सुधा श्रीवास्तव को सौंपा गया तथा संचालन का कार्य श्री चन्द्रमोहन तिवारी जी ने बखूबी निभाया। डॉ.हरिवंश राय बच्चन के अंदाज में तिवारी जी ने कविगोष्टी का आगाज़ किया – 'श्रोतागण हैं पीनेवाले, कवि सम्मेलन है मधुशाला'

सोसाइटी के 2 वर्ष की नन्ही उम्र से 16 वर्ष तक के करीब 13 बालकों ने अपनी छोटी, पर प्रभावी रचनाओं से सबको चकित कर दिया, जिनमें प्रियांशी, प्रांजल,साक्षी, श्रेयस के नाम
उल्लेखनीय हैं। श्रीमती प्रतिमा पुरोहित ने पूनम के चाँद से कामना की ' चाँद हमें रोशनीदो' श्रीमती मधु प्रसाद जी ने गीतों में मधु घोलते हुए गाया ' तेरा-मेरा करते-करते संध्या आई जीवन ' साथ ही सुनाया ' बेटियाँ होतीं हैं ऋतुएं - कभी सावन बन मन भिगो जाती। ' तो दिनेश कुमार वशिष्ठ ने गीत 'बाँसुरी नहीं तो क्या' तो क्या डांडिया का सहारा है' गाया फिर अपनी हास्य रचनाओं से सबको हँसाया भी। मंजु महिमा भटनागर ने आने

वाली पीढी को संदेश देते हुए कहा -'मिट सकते हैं ज़रूर ये नफरतों के दायरे,प्यार में हमारे ताकत होनी चाहिए। बदल सकते हैं हवा के रुख हम भी, दीवार इरादों की मज़बूत होनी है' सन्ध्या बडी रोमांचक और सुरमई रंग में रंग गई जब मंजु महिमा जी ने आह्वान किया शुकन रेज़ीडेंसी के लोगो का इन शब्दों -'चाँद है शबाब पर , उजालों में उतर आइए, भूल कर सभी शिकवे गिले, ज़रा तो मुस्कराइए।' ' सुश्री रंजना सक्सेना जी भी अपने को रोक नहीं पाईं और गुनगुना उठीं 'शरद सलौनी, चाँद नशीला, झलमल-झलमल तारा है। मौसम प्यारा-प्यारा है' और एक दीप अंतस की देहरी पर रख दो तुम... 'डॉ. प्रणव भारती ने भी ऐसे माहोल में अपने भावुक और दिल में उतर जाने वाली आवाज़ और शायराना अंदाज़ में सुनाया चाँद आसपास है, चाँदनी उजास है, तू क्यों गुम है, मुस्कुरा, ज़िन्दगी तो खास है।' तथा 'जब यह दिल किसी का हौंसला पाने लगा, शाम की तन्हाइयों में मज़ा आने लगा' प्रसिद्ध शायरा डॉ. अंजना संधीर ने अपनी बुलन्द पर प्रभावी आवाज़ में गाकर संदेशा अपने विदेश में बैठे पति तक पहुँचाया----
बारिश के नज़ारों का अंदाज़ा ज़रा लिखना, वो प्यार भरी आँखें रहती हैं मेरे दिल में, उन आँखों के रिश्तों का पता ज़रा लिखना' श्री चंद्रमोहन जी तिवारी ने जो इस कार्यक्रम के कुशल संचालक भी थे, जहाँ निराले अंदाज़ में बच्चन जी की तर्ज़ पर अपनी रचना सुनाई, 'दीपक जलाना कब कब मना है?' वहाँ इस कार्यक्रम की अध्यक्षता कर रहीं, वरिष्ट एवं डॉ. सुधा श्रीवास्तव ने अपने गीतों को लोकधुनों के रंग में रंग कर आने का आश्वासन प्यारी सी शर्त पर दिया– 'मैं आऊँगी ज़रूर, तुम पुकारते चलो पुकारते चलो, मनुहारते चलो' और अपने अन्य गीतों के टुहकों से सबको गुजरात से भोजपुरी पृष्टभूमि में पहुँचा दिया।

इन सुप्रसिद्ध कवियों की रचनाओं से प्रेरणा पाकर सोसाइटी के अन्य छुपे रुस्तम भी सामने आए जिनमें श्री वी. के. सिन्हा, श्री सलिल सिन्हा, श्री लोहखंडे और श्रीमती चैतली के नाम प्रमुख हैं।

कुल मिलाकर इस वर्ष की यह शरद पूर्णिमा एक रोमांचक यादगार काव्य-संध्या बन गई जिसे सफल बनाने का श्रेय संजीवनी संस्था को विशेष रूप से जाता है, जो समाज और साहित्य की बिखरी हुई कड़ियों को जोड़ने में प्रयासरत है। संस्था की अध्यक्षा सुश्री रंजना सक्सेना ने अपनी संजीवनी संस्था के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए बताया कि जैसे बहुत सी वनस्पतियाँ और प्रजातियाँ धीरे-धीरे विलुप्त होती जा रहीं हैं, वैसे ही अच्छा साहित्य एवं अच्छे साहित्यकारों का भी विलोप हो रहा है, अत: उनको प्रकाश में लाना और संजीवनी संस्था के द्वारा उन्हें संजीवनी प्रदान करना ही उनका लक्ष्य है। अपनी इन पंक्तियों से उन्होंने इस आयोजन को विराम दिया-
' दर्द अंतस का उमड़ता हुआ नीर है, अश्रु मन के भाव की तस्वीर है।

ज़िन्दगी की तह पर जाने पर लगा, प्रीत की बिखरी हुई जंज़ीर है'

भारतीय कोंसलावास में हिन्दी दिवस की धूम

(टोरोंटो ,26 सितम्बर,2009)
भारतीय प्रधान कोंसलावास ने हिन्दी दिवस के अवसर पर एक भव्य कवि सम्मेलन का आयोजन किया। उपस्थित हिन्दी प्रेमियों का स्वागत करते हुये,कोंसलावास की चांसरी के प्रमुख महेन्द्र प्रताप सिह ने कहा कि वो हिन्दी के प्रचार एवं प्रसार में संलग्न सभी संस्थाओं को सहयोग देंगे। हिन्दी मंच के सह संस्थापक तथा कवि सम्मेलन के आयोजक, देवेन्द्र मिश्र ने कहा कि हिन्दी विश्व की तीन सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषाओं में एक है चूंकि भाषा किसी भी संस्कुति की आत्मा होती है इसे बरकरार रख कर आगे बढ़ाना हमारा दायित्व है ।

कवि सम्मेलन की मुख्य अतिथि, दीप्ति अचला कुमार ,ने स्व0 महादेवी वर्मा के साथ बिताये अपने अनुभवों की चर्चा की और उनकी कुछ अनुपम रचनायें प्रस्तुत कर सबका मन मोहा। कवि सम्मेलन में स्थानीय कवि गणों में पराशर गौड़ , शान्ति स्वरूप सूरी, सुरेन्द्र पाठक, सुधा मिश्रा,मीना चोपड़ा, विजय विक्रान्त, गोपाल बघेल, राकेश तिवारी, संदीप त्यागी, हरजिंदर सिंह भसीन,हरि मोहन सिंह,
दीप्ति अचला कुमार एवं देवेन्द्र मिश्र ने हिन्दी कविताओं के विभिन्न स्वरूपों की मनोहारी प्रस्तुति द्वारा उपस्थित हिन्दी प्रेमियों का दिल जीत लिया। सभी लोगों ने टोरंटो स्थित भारतीय प्रधान कोंसलावास तथा हिन्दी मंच द्वारा आयोजित कार्यक्रमों की प्रशंसा की।

शरद तैलंग 'सृजन रतन सम्मान' २००९, से सम्मानित

कोटा : दिवंगत शिक्षाविद एवं साहित्यकार स्व. डॉ. रतन लाल शर्मा की जयन्ती समारोह में साहित्य और संगीत के क्षैत्र में विशेष योगदान के लिए शरद तैलंग तथा साहित्य और शिक्षा के क्षैत्र के लिए डॉ. सी.एल.गंगन को 'सृजन रतन सम्मान'2009 से सम्मानित किया गया। कोटा राजस्थान के प्रेस क्लब में आयोजित इस समारोह की अध्यक्षता साहित्यकार श्रीमती कमला कमलेश ने की। मुख्य अतिथि डॉ. नरेन्द्र नाथ चतुर्वेदी थे। उन्होने अपने वक्तव्य में कहा कि डॉ. रतन लाल शर्मा का जैसा व्यक्तित्व था ऐसे ही विचारकों की आज आवश्यकता है जो नई पीढ़ी को सही दिशा प्रदान कर सकें। शायर फ़ारूख बख्शी ने शर्मा के बारे में कहा कि वे एक मनोवैज्ञानिक की तरह सोचते थे तथा फिलोसफ़र की तरह ज़िन्दगी गुज़ारते थे। वे गंगा जमुनी तहज़ीब का आईना थे। मुख्य अतिथि डॉ. चतुर्वेदी तथा अध्यक्ष कमला कमलेश ने शरद तैलंग तथा डॉ. गंगन को शाल ओढ़ा कर तथा स्मृति चिन्ह दे कर सम्मानित किया। शरद तैलंग ने डॉ. शर्मा की काव्य कृति 'कसक' में से दो गज़लों की संगीतमय प्रस्तुति दी। कार्यक्रम का संचालन साहित्यकार महेन्द्र नेह ने किया तथा सहयोग डॉ. शर्मा के पुत्र स्वप्नेश रतन तथा धैर्य रतन ने दिया। सम्मान समारोह के पश्चात काव्य संन्ध्या का आयोजन भी किया गया जिसमें कोटा के अनेक रचनाकारों जिनमें डॉ. इन्द्र बिहारी सक्सेना, रमेश चन्द्र गुप्त, महेन्द्र कुमार शर्मा, राम नारायण 'हलधर', किशन लाल वर्मा, डॉ. उदय मणि, लक्ष्मी दत्त 'तरुण', अरुण सेदवाल, महेन्द्र नेह, शकूर अनवर, आनन्द हज़ारी, आदि रचनाकारों ने काव्यपाठ किया। संचालन विजय जोशी ने किया। कार्यक्रम में स्व. डॉ. शर्मा की पत्नी श्रीमती कैलाश शर्मा भी उपस्थित थीं ।
सम्मान प्राप्त करने के पश्चात स्वपनेश रतन, शरद तैलंग, डॉ. सी.एल. गंगन. मुख्य अतिथि डॉ. नरेन्द्र नाथ चतुर्वेदी तथा संयोजक महेन्द्र नेह।

प्राप्त हुई पुस्तकें –

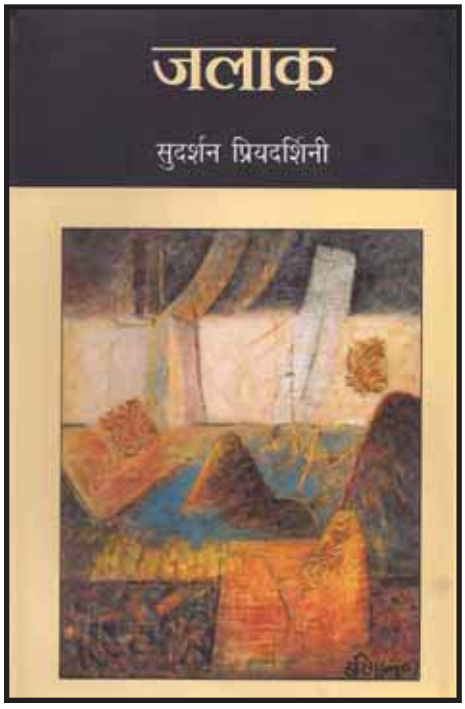
जलाक
सुदर्शन प्रियदर्शिनी

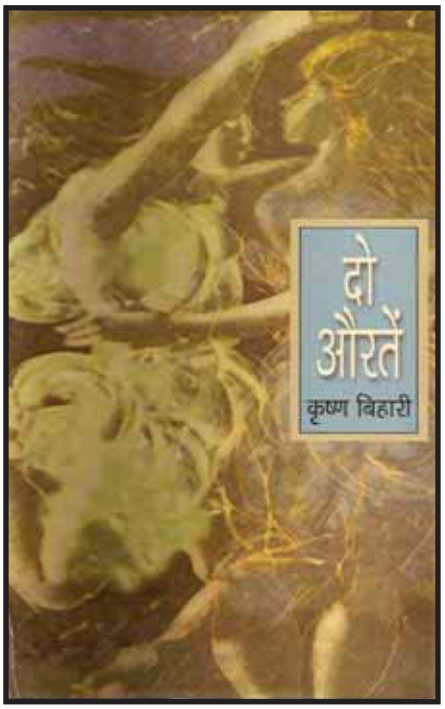
दो
औरतें
कृष्ण बिहारी

अवतरण
ज्योति के पथ पर

दिल से
दिल तक...
देवी नागरानी

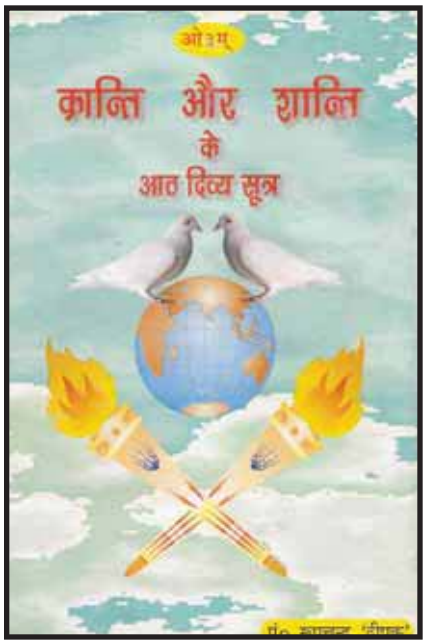
ओ३म्
क्रान्ति और शान्ति
के
आठ दिव्य सूत्र

Hindi Pracharni Sabha

Membership Form

Annual Subscription:	**$25.00 Canadian**
Life Membership:	**$200.00 Canadian**
Donation:	**$ _____**
Method of Payment:	**Cash, cheques and drafts payable to "Prachani Sabha"**

Your Name:_____

Address: _____

_____

Telephone: Home: _____

Business: _____

e-mail: _____

_____

Contact in Canada:

Hindi Pracharni Sabha
6 Larksmere Court
Markham, Ontario L3R 3RI
Canada
(905)-475-7165
e-mail: hindichetna@yahoo.ca

Contact in USA:

Dr. Sudha Om Dingra
101 Guymon Court
Morrisville, North Carolina
NC27560, USA
(919)-678-9056
e-mail: ceddlt@yahoo.com

CARPET PLUS

SAVE UP TO 70%
LUXURIOUS CARPETS
ORIENTAL RUGS

Commercial &
Residential
Installations

F •*Installation*
R •*Underpad*
E •*Delivery*
E •*Shop at Home*

(416) 661-4444
(416) 663-2222

Broadloom

Vinyl Tiles

180 Winges Rd.,
Unit 17-19
Woodbridge, Ontario
L4L 6C6

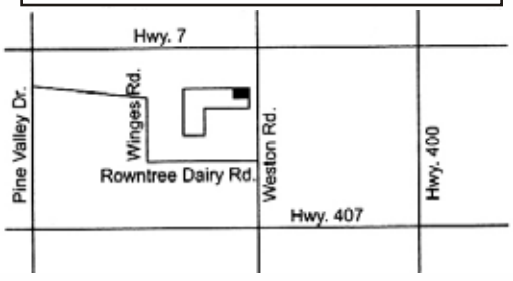

PINS FLAGS

Finest Source of :

International Flag Pins

Campaign Buttons

Friendship Pins

Embroided Crests (Patches) of All Countries

International & Provincial Flags of all sizes, Souvenirs

Mini Banners & Keychains of all countries available

Custom work available for Pins, Buttons, Crests and Flags
At Factory Direct Prices Free Set up & Shipping

We carry more than 500 Titles each of Pins, Flags & Crests in stock

Pinsnflags.com Inc., 395 Spadina Ave., Toronto, Ont., M5T 2G6

Tel: 416-596-1574 Fax: 416-596-2248
Toll Free: 1-877-322-4771 E-Mail: veena@pinsnflags.com
www.pinsnflags.com

मेरे मित्रो! हिन्दी बोलो, अपने बच्चों को हिन्दी सिखाओ! अपनी भाषा और संस्कृति को बचाओ!।